

महाराजाधिराज श्री गङ्गासिंहजी बहादुर

बाल-अवस्था का चित्र

बीकानेर नरेश

जनरल हिज़ हाइनेस महाराजाधिराज राजराजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि
महाराजा श्री गंगासिंहजी बहादुर जी.सी.एस.आई., जी. सी. आई. ई.,
जी.सी.वी.ओ., जी.बी.ई., के.सी.बी., ए.डी.सी., एल.एल डी.

का

संक्षिप्त जीवन चरित्र

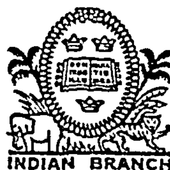
प्रथम भाग

मूल लेखक

मेजर के. ऐम. पनिक्कर, बी. ए. (औक्सन), बार-ऐट-ला
फॉरेन ऐण्ड पोलिटिकल मिनिस्टर ऐण्ड वाईस प्रेसिडैन्ट
ऑफ़ कौन्सल, बीकानेर स्टेट

अनुवादक

पं० महेन्द्रशंकर पाण्डे एम. ए., बी. टी.
वाल्टर नोबल्स हाई स्कूल, बीकानेर



हम्फ़रे मिल्फ़ोर्ड

ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस

बम्बई कलकत्ता मद्रास

BIKANER NARESH Bhag I
(Maharaja of Bikaner Part I)
Hindi translation of
K. M. PANNIKAR'S MAHARAJA OF BIKANER.

First published January, 1943. प्रथमावृत्ति, जनवरी, १९४३

बाबू जे. ऐस. पाल, बसन्त प्रिंटिंग प्रैस, [illegible] रोड, लाहौर।

प्राक्कथन

वर्तमान बीकानेर नरेश का भारतीय राजनीति में प्रमुख स्थान है। ये आदर्श नरेश देशभक्त एवं साम्राज्य के महान् स्तम्भ हैं। अपने अथक परिश्रम से इन्होंने बीकानेर की मरुभूमि को नन्दनकानन बना दिया है। उन्नत सुधारों तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण पूर्वीय एवं पाश्चात्य प्रमुख व्यक्तियों ने इनकी पर्याप्त प्रशंसा की है। आपके स्वर्ण महोत्सव के शुभावसर पर मेजर के एम. पनिक्कर, बार-ऐट-ला, ने इनका जीवनचरित्र प्रशंसनीय विद्वत्ता के साथ लिखा। प्रस्तुत पुस्तक इसी अंगरेज़ी में लिखे हुए जीवन चरित्र का भावानुवाद है। अनुवाद करते समय भाषा एवं भावों को बच्चों के लिये बोधगम्य बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है।

इतिहास की तरफ़ बालकों को जीवन चरित्रों के द्वारा ही आकर्षित किया जा सकता है; फिर इसके साथ दूसरा लाभ यह है कि उनके बाल-हृदयों पर महान् चरित्रों का आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। यह प्रारम्भिक प्रभाव बालकों के जीवननिर्माण का मुख्य साधन है। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये आदर्श शासक बीकानेर नरेश का जीवन-चरित्र अनुवादित किया गया है। बच्चे इनके जीवन से बहुत सी अनुपम शिक्षायें धारण कर सकते हैं। नियम और शक्तिसाधना के सम्बन्ध में भारतीय बच्चों को चाहिये कि इनके जीवन-चरित्र का मनन करें।

चौथी और पांचवीं कक्षाओं के लिये यह जीवन चरित्र दो भागों में विभक्त किया गया है। इस पहले भाग में चरित्र-नायक की रजत-जयन्ती तक की महत्व पूर्ण घटनाओं का वर्णन है।

मुझे इस पुस्तक के अनुवाद में अपने मित्र प्रो. नरोत्तम

दास जी स्वामी, एम. ए., विशारद, साहित्यरत्न, पं० रामनिवास जी हारीत, बाबू उमाशंकर सहाय जी, पं० रावतमल जी सारस्वत बी. ए. और अपनी धर्मपत्नी श्रीमती हेमलता पाण्डेय, विशारद, से समय समय पर सहायता मिली। उसके लिये मैं इन का हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता हूं। इन सज्जनों के अतिरिक्त श्रीयुत बाबू कामता प्रसाद, बी. ए., एल. एल. बी., सेक्रेटरी, फॉरेन एण्ड पोलिटिकल डिपार्टमेंट, बीकानेर स्टेट, ने अपना अमूल्य समय देकर पुस्तक का प्रूफ़ आदि से अंत तक पढ़ा और आवश्यक संशोधन एवं परिवर्तन किया, इस अनुग्रह के लिये मैं आपका हृदय से आभारी हूँ। अंत में मूल लेखक मेजर के. एम. पनिक्कर, बार-ऐट-ला, और प्रकाशक आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस को भी धन्यवाद देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं।

महेन्द्रशंकर पाण्डेय।

३-१-१९४३

विषय-सूची

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१४	गौरी	गोरी
४	२	चूंडासर	चांडासर
४	१८	कलकरण	कलिकर्ण
८	१२	धूहड़जी के	धूहड़जी की
१३	१५	सरदारों	सरदारों
१५	८	राजा करणसिंह जी का—	उनका
१५	१२	नावों	नावों
१५	२०	राजाओं	राज्यों
*१६	८	महाराज	महाराजा
१७	३	ठाकुर का विद्रोह	ठाकुरों के विद्रोह का
१८	१५	किये	दिए
१८	१५	संठगन	संगठन
१८	१६	न्आयालय	न्यायालय
१९	१	किसी रियासत	किसी भी रियासत
१९	८	मथा	तथा
१९	१९	महरारजा	महाराजा
१९	२१	हतस्तक्षेप	हस्तक्षेप
२१	१	महारजा	महाराजा
२१	१८	वर्षो	वर्षों

*नोट—अन्यत्र भी इनके लिए महाराज की जगह महाराजा कर दिया जाय।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२	१४	रन्त	तुरन्त
२२	१६	छोट	छोटे
२४	१	को	के
२४	२	लिया	दिया
२४	२०	है	हैं
२४	२१	ठीकाई	टीकाई
२५	१	सरदरों	सरदारों
२६	१	ससय	समय
२६	१४	नहीं सिद्ध	सिद्ध नहीं
२८	३	सद्व्यहार	सद्व्यवहार
२८	१८	ये	थे
२९	१३	रिजेंसी	रिजेंसी–कौंसिल
३०	१०	हैं	किये
३०	१४	दफ़दरों	दफ़्तरों
३०	१९	जागीदारों	जागीरदारों
३१	१	जर्ट	इजर्टन
३१	१७	प्रशंनीय	प्रशंसनीय
३२	१२	के तरफ	की तरफ
३३	२१	महराजा	महाराज
३४	२	कलकत्ता, दार्जि-लिंग	कलकत्ता और दार्जिलिंग
३७	१५	के	की
३९	१२	वर्षों	वर्षा
३९	१३	रिजेंसी-कौंसिल	रिजेंसी-कौंसिल
४०	११	बड़ा अकाल	बड़ा कार्य अकाल

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४०	१७	मुख्य जनता	मुख्य कार्य जनता
४२	१०	प्रजा हित्तैषिता	प्रजा हितैषिता
४२	१५	नोषणा	घोषणा
४२	१७	वापिस लौटनें	लौटने
४२	२०	राज्यभिषेक	राज्याभिषेक
४४	१	राज्यभिषेकोत्सव	राज्याभिषेकोत्सव
४४	११	निजि	निजी
४५	२०.	कर्य्य	कार्य्य
४६	४	कर	रख
४६	८	इसमें	इससे
४६	१६	जागीदार	जागीरदार
५०	१६	परिणित	परिणत
५१	६	के	का
५१	१६	हुवा	हुआ
५१	२०	अैर	और
५३	१०	ब्रिटिश	बृटिश
५३	१४	गोपालपुर	गोपालपुरा
५४	१६	अवसर	अवसर पर
५५	१३	पोकिटिकल	पोलिटिकल
५८	११	मनुष्य	लोग
५९.	२०	स्थान	स्थानों
६१	५	रुपये ते हैं	रुपये लेते हैं
६१	८	आ निक	आधुनिक
६१	१८	यह	ये
६१	२१	हाराजा	महाराजा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३	७	यह	ये
६४	२	वेल्स आगमन	वेल्स के आगमन
६४	८	क प्रथा	यह एक प्रथा
६६	१४	महाराजा	महाराज
६७	११	,,	,,
७२	९	द्वारा	को
७२	११	पारस्पारिक	पारस्परिक
७२	१३	भेंट की	भेंट की।
७२	१४	द्वारा	को
७३	१	गलैंड	इंगलैंड
७३	१	प्रबन्ध	सम्बन्ध
७३	३	करते हुए भारत-वासी साम्राट	करते हुए, सम्राट्
७९	३	का	को
७९	४	प्रकट किया	दिया
८०	६	बाद राज्य	बाद उन्होंने राज्य
८०	१८	उर्दू	उर्दू को
८१	२	राजकार्य भाषा	राजकार्य की भाषा
८२	१	वार्डज़	वार्डस
८६	१	बनायगा	बनायेगा
८६	१०-११	राज्यों के	राज्यों की
९१	१३	प्रकार होना	प्रकार का होना
९३	१९	भिन्न	भिन्न भिन्न

पहला पाठ

राज्य-स्थापना

राजपूत लोग अपनी बहादुरी, देशप्रेम और शरण में आये हुये की रक्षा करने में सदा से प्रसिद्ध हैं। भारत का इतिहास इनके इन गुणों का साक्षी है। परन्तु राठौड़ों ने अपनी वीरता तथा अद्वितीय साहस के कारण दूसरे राजपूत वंशों की अपेक्षा अधिक नाम कमाया है। राठौड़ उन सूर्यवंशी क्षत्रियों में से हैं जिनका वर्णन रामायण और महाभारत में पाया जाता है। प्राचीन काल में राठौड़ दक्षिणी भारतवर्ष में राज्य करते थे। उस समय ये राष्ट्रकूट नाम से प्रसिद्ध थे। धीरे धीरे इनका राज्य फैलने लगा और दशवीं शताब्दी में इन्होंने उत्तरी भारतवर्ष में कन्नौज को अपनी राजधानी बना कर एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। कन्नौज में जयचन्द इस वंश का बड़ा प्रतापी राजा हुआ। परन्तु जयचन्द और पृथ्वीराज चौहान में अनबन थी। इसलिये जब मुहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किया तो राजपूत लोग आपस की फूट के कारण हार गये। इसका परिणाम यह हुआ कि अन्य राजपूत

राज्यों के साथ साथ कन्नौज का राठौड़ राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया।

इस हार से राठौड़ हताश न हुए। उनकी एक शाखा अपने कुलदेवता की मूर्ति और राज्य-चिह्न लेकर घूमती और भटकती हुई राजपूताने के मरुस्थल में पहुँची। यहां चौदहवीं शताब्दी में उन्होंने मारवाड़ राज्य की स्थापना की। कुछ समय बाद राव जोधाजी ने अपने नाम पर जोधपुर नगर बसाया और मोहिलों तथा जाटों को हरा कर राज्य-विस्तार किया।

बीकानेर राज्य की स्थापना करने वाले राव बीकाजी थे। यह राव जोधाजी के पुत्र थे। राव जोधाजी की छः रानियां थीं। एक रानी के गर्भ से नींबाजी और सांतल जी हुये, और दूसरी रानी के गर्भ से बीकाजी और बीदा-जी थे। राव बीकाजी अपने पिता के छोटे पुत्र होने के कारण राज्य के अधिकारी नहीं थे। इसलिये वह अपने लिये एक नया राज्य जीतना चाहते थे और थोड़े से सैनिकों सहित जोधपुर छोड़ कर चल पड़े। इस विषय में एक कथा प्रसिद्ध है।

एक समय राव जोधाजी अपने दरबारियों सहित बैठे थे। इसी समय राव बीकाजी धीरे-धीरे अपने चाचा कांधलजी से बातें करने लगे। राव जोधाजी ने यह देख

कर ताना देते हुए हँसी में कहा कि क्या चाचा भतीजे कोई नया देश जीतने की बात कर रहे हैं। इस पर कांधल जी ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि यदि आप की यही इच्छा है तो हम लोग अवश्य नया देश जीत कर दिखायेंगे। अतः राव बीकाजी तथा कांधलजी ने नापा-सांखला की सलाह से जोधपुर के त्तर का प्रदेश जीतने का विचार किया। सन् १४६५ ई० में राव बीकाजी तथा कांधल जी १०० घुड़सवार और ५०० पैदल सेना सहित जोधपुर से उत्तर की ओर चल दिये।

सब से पहले बीकाजी मंडोर पहुँचे। कहते हैं कि यहाँ के मन्दिर में भगवान शिवजी ने प्रकट होकर बीकाजी को आशीर्वाद दिया और बीकाजी प्रसन्नतापूर्वक अपनी सेना सहित देशनोक पहुंचे। जोधपुर राज्य के उत्तर का भाग बीकाजी ने अपने अधिकार में कर लिया। परन्तु यह भाग उजाड़ था। यहाँ से उत्तर की ओर भाटी राजपूत राज्य करते थे। पूर्व में जाट थे और इधर उधर और कई छोटे राज्य थे। देशनोक में करणीजी नामक एक चारण स्त्री थीं। इनकी धार्मिकता और ईश्वर-प्रेम के कारण आस-पास के सब राव राजा इन की उपासना करते थे। पूगल का भाटी राजा इनका बहुत आदर करता था। श्री करणीजी ने बीकाजी को आशीर्वाद देते हुये कहा—"तेरा प्रताप जोधा से सवाया

बढ़ेगा और बहुत से भूपति तेरे चाकर होंगे।" बीकाजी श्री करणीजी की सलाह से चूंडासर में रहने लगे।

बीकाजी ने धीरे धीरे अपना राज्य बढ़ाया और कोडमदेसर में एक किला बनवाया। यहां श्री भैरों जी का मंदिर भी बीकाजी ने बनवाया। बीका जी के पास सेना कम थी। इस छोटी सी सेना से राज्यकी सीमा बढ़ाना बड़ा कठिन था अतः उन्होंने श्री करणीजी से इस विषय में सलाह मांगी। श्री करणीजी ने उन्हें पूगल के राव शेखाजी की कन्या से विवाह करने की सलाह दी। शेखाजी पहले तो इस बात पर राज़ी नहीं हुये, परन्तु थोड़े दिन बाद मुलतान के मुसलमान सूबेदार ने उन्हें कैद कर लिया। इस अवसर पर बीकाजी ने उनको कैद से छुड़ाया। इस लिये करणीजी के कहने पर उन्होंने बीकाजी से अपनी कन्या का विवाह कर दिया।

इस विवाह सम्बन्ध से भाटियों के देश में बीकाजी की शक्ति पहले से अधिक बढ़ गई। परन्तु भाटी राजपूत इनकी बढ़ती हुई शक्ति को रोकने का प्रयत्न करने लगे। भाटियों ने कलकरण की अध्यक्षता में एक बड़ी सेना एकत्रित की और बीकाजी से लड़ने को आये। घमासान युद्ध हुआ परंतु भाटी हार गए। बीकाजी ने भाटियों का विरोध देख कर वहां किला बनाना उचित नहीं

समझा और वहाँ से दूर हटकर सन् १४८६ ई० में बीका-जी ने एक गढ़ बनवाया। इसी गढ़ के आस पास सन् १४८८ ई० में बीकाजी ने अपने नाम पर बीकानेर नगर बसाया, जो आज कल बीकानेर राज्य की राजधानी है तथा भारत के कला पूर्ण और प्रसिद्ध नगरों में गिना जाता है।

दूसरा पाठ

वंश गौरव

हम पहले पाठ में पढ़ चुके हैं कि राव बीकाजी ने भाटियों को हरा कर एक सुदृढ़ गढ़ बनवाया और बीकानेर नगर बसाकर एक नया राज्य स्थापित किया। धीरे धीरे बीकाजी ने राज्य की सीमा बढ़ाने की ओर ध्यान दिया। इनके बढ़ते हुए राज्य को देख कर शक्तिशाली जाटों ने इनका विरोध किया। इस समय जाटों में आपस में फूट थी। बीकाजी ने चतुराई से काम लिया। परिणाम यह हुआ कि गोदारा जाटों ने बिना लड़े बीकाजी की अधीनता स्वीकार करली। इसके बदले में बीकाजी ने गोदारा जाटों के सरदारों को यह अधिकार दिया कि बीकानेर राज्य के नये राजा के राजतिलक पर सब से पहले उनके वंशज तिलक करेंगे। यह प्रथा अब तक चली आती है। गोदारा जाटों को वश में करने के बाद अन्य जाट और राजपूत राजाओं को हरा कर बीकाजी ने जयपुर की ओर मोहिलों के राज्य तक और उत्तर पूर्व में हिसार तक राज्य की सीमा बढ़ा ली।

इस समय मोहिलवाटी राव बीकाजी के छोटे भाई बीदा

जी के अधिकार में थी। मोहिल सरदारों ने दिल्ली के सुल्तान से सहायता मांगी। दिल्ली के सुल्तान ने हिसार के सूबेदार सारङ्गखां की अध्यक्षता में एक सेना भेजी। बीदाजी अकेले इस सेना का सामना करने में असमर्थ थे। इसलिये उन्होंने राव बीकाजी से सहायता माँगी। बीकाजी ने मुसलमानों को हरा कर मोहिलवाटी बीदाजी को वापस दे दी। इसके बदले में बीदाजी ने बीकाजी की अधीनता स्वीकार कर ली।

राव जोधाजी ने अपने स्वर्गवास से पहले बीकाजी से यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि वह जोधपुर राज्य अपने छोटे भाइयों के लिये छोड़ देंगे। बीकाजी के बड़े भाई का देहांत हो गया था और जोधाजी के बाद यही राज्य के अधिकारी थे। परन्तु अपने पिता के कहने पर बीकाजी इस शर्त पर जोध-पुर राज्य छोड़ने पर सहमत हो गये कि कन्नौज से लाये हुये राज्य-चिह्न तथा राज्य-छत्र इत्यादि इन्हें मिलें क्योंकि यह बड़े थे। जोधाजी ने यह शर्त स्वीकार कर ली। राव जोधाजी का सन् १४८१ ई० में स्वर्गवास हो गया और राव सूजोजी जोधपुर के सिंहासन पर बैठे। राव बीकाजी ने शर्त के अनुसार छत्र, चंवर, सिंहासन, कुलदेवी की मूर्ति तथा अन्य राज्य चिह्नादि मांगे परन्तु सूजोजी ने देना अस्वीकार किया। अतः बीकाजी ने सेना सहित जोधपुर पर आक्रमण कर दिया परन्तु सूजोजी की माता ने बीच

बचाव करके छत्र तथा सिंहासन इत्यादि बीकाजी को देकर विदा किया। राव बीकाजी जोधपुर से निम्नलिखित वस्तुएं बीकानेर ले आये:—

(१) चन्दन का बना हुआ सिंहासन। यह कन्नौज से आया था। (२) छत्र। (३) चँवर। (४) राव जोधाजी की तलवार। (५) राव जोधाजी की ढाल। (६) हरबूजी सांखला की दी हुई कटार। (७) हिरण्यगर्भ लक्ष्मीनारायण जी की मूर्ति। यह गढ़ के प्रधान मन्दिर 'हरि मन्दिर' में है। (८) नागणेचीजी की चांदी की मूर्ति। यह राजधानी के एक प्रधान मन्दिर में स्थापित है। (९) करंड अर्थात पूजा की पेटी। इसके ऊपर यह लेख है कि यह राव सीहाजी के पौत्र राव धूहड़जी के पूजा की है। यह पेटी आजकल गढ़ में नागणेचीजी के मन्दिर में है। (१०) दक्षिणावर्त शंख। यह अब भी हरिमन्दिर में है। (११) राव चूंडाजी का भंवरढोल। (१२) थापण जांभाजी का दिया हुआ बैरीसाल नगारा। (१३) भूंजाई की देगें। (१४) दलसिंगार घोड़ा।

राव बीकाजी ने मरुस्थल में राज्य की स्थापना की। जिधर देखो बालू ही बालू दिखाई देती थी। पेड़ का कहीं नाम नहीं था, देश उजाड़ था, कहीं जीवन निर्वाह के साधन नहीं दिखाई देते थे। परन्तु बीकाजी हताश न हुये।

राठौड़ परिश्रमी होते हैं। संकटों से डरते नहीं वरन् कठिनाइयों का सामना करके सफलता प्राप्त करना उनकी नस-नस में भरा है। बीकानेर नरेश उन्हीं राव बीकाजी के वंशज हैं। गत पांच सौ वर्षों से बीकानेर स्वतन्त्र राज्य रहा है। बीकानेर नरेश मुग़ल साम्राज्य के स्तम्भ, ब्रिटिश सरकार के मित्र तथा सुविख्यात महान शासक के रूप में सदा अद्वितीय रहे हैं।

मुग़ल सम्राट अकबर के समय से बीकानेर राजपूताने में प्रमुख राज्य बन गया। राव कल्याणसिंहजी ने अकबर से मित्रता करके अपने राज्य को बहुत लाभ पहुँचाया। बीकानेर की यह मित्रता मुगलों से २०० वर्षों तक बनी रही। राव कल्याणसिंहजी के पुत्र रायसिंहजी अकबर के सर्वश्रेष्ठ मनसबदारों में थे। यह एक वीर योद्धा थे और अकबर की लगभग सभी मुख्य २ लड़ाइयों में इन्होंने सेना का संचालन किया। अहमदाबाद की लड़ाई में इन्होंने वहां के गवर्नर मिर्ज़ा मुहम्मद हुसेन को अपने हाथों मार कर अपना यश अमर कर दिया। अकबर के पश्चात् जहांगीर भी रायसिंहजी पर पूर्ण विश्वास करता था और इनका पूर्ण रूप से कृतज्ञ था। अकबर ने इन्हें १५७३ ई० में राजा की उपाधि दी। जहांगीर ने राजा रायसिंहजी को पाँच हजार का मनसबदार बनाया। उस समय हिन्दू नरेशों में जयपुर

के बाद राजा रायसिंहजी का ही सम्मान मुग़ल दरबार में बढ़ा चढ़ा था। इस समय जो बीकानेर में किला है वह रायसिंहजी ने ही बनवाया था। इस किले में इन्होंने अनेक महल बनवाये जो कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर हैं।

रायसिंहजी के छोटे भाई पृथ्वीराजजी अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान् और कवि थे। यह अकबर के घनिष्ट मित्रों में से थे। इनकी मृत्यु पर अकबर को बहुत दुःख हुआ और उसने निम्नलिखित दोहा कहा :—

पीथल सों मजलिस गई, तानसेन सों राग,
हंसिबो रमिबो बोलिबो, गयो बीरबल साथ।

पृथ्वीराजजी की डिंगल भाषा में लिखी हुई पुस्तक 'वेलि क्रिसन रुकमणी री' राजस्थानी साहित्य की सब से अच्छी पुस्तक मानी जाती है। पृथ्वीराजजी इस लिये विशेष प्रसिद्ध हैं कि इन्होंने एक जोशीला पत्र लिख कर राणा प्रताप को अकबर की अधीनता स्वीकार करने से बचाया। अकबर अधीनता स्वीकार करने के विषय में प्रताप का पत्र पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और पृथ्वीराज जी से सब वृतान्त कह सुनाया। पृथ्वीराजजी ने एक ओजस्वी कविता राणा प्रताप को लिख कर उन्हें पुनः उत्साहित किया। इस विषय में अंग्रेज-इतिहास

लेखक टाड ने लिखा है कि पृथ्वीराज जी के पत्र ने राणा को दस हज़ार सेना का बल प्रदान किया।

रायसिंहजी के बाद दलपतसिंहजी, सूरसिंहजी तथा करणसिंहजी क्रमशः बीकाने के सिंहासन पर विराजे। करणसिंहजी के पुत्र महाराजा अनूपसिंहजी का राज्य-काल बीकानेर राज्य का स्वर्ण-युग कहा जाता है। यह विद्या, कला और संगीत के पोषक थे, तथा स्वयं संस्कृत, गणित एवं ज्योतिष के अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने अनेकों हस्तलिखित पुस्तकें एकत्र करके बीकानेर के क़िले में एक पुस्तकालय की स्थापना की जो अब तक है। इस पुस्तकालय में कुछ ऐसी हस्तलिखित पुस्तकें हैं जो अन्यत्र नहीं पाई जातीं। विद्या के साथ साथ वीरता भी इनमें कूट कूट कर भरी थी। यह औरंगज़ेब के प्रधान सेनानायकों में से थे। दक्षिणी भारत में यह वर्षों तक औरंगज़ेब की सेना का संचालन करते रहे और बीजापुर और गोलकुंडा के क़िले इनके पराक्रम से ही औरंगज़ेब के हाथ लगे थे।

इस प्रकार बीकानेर राज्य के प्रत्येक नरेश तथा अन्य राठौड़ सरदारों ने मुग़ल साम्राज्य को उन्नति के शिखर तक पहुँचाने का पूर्ण प्रयत्न किया। मुग़ल बादशाहों ने समय समय पर अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए समकालीन बीकानेर नरेशों को महाराजा, महाराजाधिराज, राज

राजेश्वर, नरेन्द्र शिरोमणि उपाधियों से विभूषित किया और माहिमरातिब का महान सम्मान प्रदान किया। मुग़लों के समय में यह सबसे बड़ा सम्मान था। मुग़ल बादशाह यह सम्मान दूसरे शासकों को सरलता से नहीं देते थे, परन्तु बीकानेर नरेशों ने यह महान सम्मान तीन बार प्राप्त किया। इससे जान पड़ता है कि मुग़ल दरबार में बीकानेर शासकों का स्थान बहुत ऊँचा था।

तीसरा पाठ

जय जङ्गलधर बादशाह

हम पढ़ चुके हैं कि बीकानेर के शासक मुग़ल सम्राटों के मित्र थे और अपनी सेना सहित सदा उनकी सहायता के लिये तत्पर रहते थे। परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिये कि बीकानेर के शासक मुग़लों के हाथों की कठ-पुतली थे। जब कभी ये अपने सम्मान पर कुठाराघात होते देखते तथा अपने अधिकार में सम्राट को हस्तक्षेप करते पाते तो बीकानेर के शासक मुग़ल सम्राट तो क्या काल से भी लड़ने में नहीं डरते थे। इस विषय में नीचे लिखी घटना विशेष महत्व की है जिसके कारण बीकानेर नरेश 'जय जङ्गलधर बादशाह' के नाम से विख्यात हैं।

बादशाह औरङ्गज़ेब कट्टर मुसलमान था। उसने हिन्दुओं के प्रसिद्ध मन्दिर तुड़वाकर उनके स्थान पर मसजिदें बनवाईं। बनारस, वृन्दावन तथा अन्य स्थानों के मन्दिर नष्ट करा देने के पश्चात् वह प्रधान राजपूत राजा तथा सरदारों को मुसलमान बनाने का विचार करने लगा। एक समय औरङ्गज़ेब ने एक बड़ी सेना

सहित सिन्ध नदी के पार जाने के लिये प्रस्थान किया। इस समय अनेक राजपूत राजा अपनी सेनाओं सहित इसके साथ थे। अटक पहुँचने पर बीकानेर नरेश राजा करणसिंहजी को एक सैय्यदसे यह पता चला कि औरंगज़ेब सिंध नदी पार करने पर सब हिंदुओं को मुसलमान बनाना चाहता था। यह सैय्यद बीकानेर नरेश का नौकर था। यह समाचार सुनकर राजपूत राजाओं ने आपसमें सलाह करके यह निश्चय किया कि किसी प्रकार पहले मुसलमान नदी पार करें। सबने चतुराई से काम लिया। राजपूतों ने एक हरकारा भेजकर यह घोषणा करा दी कि प्रातःकाल राजपूत नदी पार जायेंगे अतःतमाम नावें उनके लिये सुरक्षित रहें। यह समाचार सुनकर मुसलमान क्रोधित हुये और राजपूतों से पहले नदी पार जाने में उन्होंने अपना बड़प्पन समझा। राजपूत तो यह चाहते ही थे। अतः दूसरे दिन सारी मुसलमानी सेना नदी पार उतर गई। राजपूतों को इसी समय आमेर नरेश की माता के स्वर्गवास का समाचार मिला। इसलिये बारह दिनों तक वे नदी पार नहीं जा सके। इस समय में राजाओं ने आपस में सलाह करके निश्चय किया कि नावों को नष्ट करके घर वापिस लौट चलना चाहिये। सब राजाओं ने मिल कर राजा करणसिंहजी से प्रार्थना की कि नावों के तोड़ने का कार्य

पहले आप प्रारम्भ करें। आप का राज्य दिल्ली से दूर मरुस्थल में है और वहाँ आक्रमण करने का औरङ्गज़ेब साहस नहीं करेगा। राजा करणसिंहजी इस बात से सहमत हो गये, परन्तु उन्होंने अन्य राजाओं से यह प्रतिज्ञा कराई कि सब लोग एक बार उनकी जय बोलें और उनके सम्मुख मुजरा करें। सब राजाओं ने यह स्वीकार किया। राजा करणसिंहजी गद्दी पर बैठे और अन्य राजाओं ने उन्हें 'जय जङ्गलधर बादशाह' का सम्बोधन दे कर राजा करणसिंहजी का सम्मान किया और उनकी जय मनाई। इसके पश्चात् राजा करणसिंहजी ने औरङ्गज़ेब के दूत के सामने नाव पर कुल्हाड़ा चलाया फिर अन्य राजाओं ने भी सब नावों को नष्ट किया और अपने राज्य में सुरक्षित लौट आये। जिस सैय्यद ने राजा करणसिंहजी को औरंगज़ेब के षड्यन्त्र का समाचार बताया था उसे करणसिंहजी ने बहुत पुरस्कार दिया और सदा के लिये प्रत्येक घर पीछे एक पैसे की लाग बांध दी जो आज तक उस सैय्यद के वंशजों को मिलती है।

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद बीकानेर राज्य को कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। परन्तु फिर भी अन्य निकटवर्ती राजाओं की भाँति यह कभी मरहठों के अधिकार में न आया। उदयपुर, जयपुर तथा जोधपुर

मरहठों के सम्मुख झुकना पड़ा और उन्हें कर देना पड़ा परन्तु बीकानेर अपनी भौगोलिक-स्थिति और शासकों की वीरता तथा बुद्धिमत्ता के कारण सदा मरहठों के आक्रमण से बचा रहा एवं सदा स्वतन्त्र रहा। बीकानेर राज्य के लिये यह बड़े गौरव की बात है कि यहाँ कभी मरहठों को चौथ नहीं मिली।

मुग़ल साम्राज्य के छिन्नभिन्न हो जाने के कारण राजपूताने में अराजकता फैल गई। ऐसे समय महाराज सूरतसिंहजी ने राजपूताने की रियासतों में अपना सम्मान तथा अधिकार बढ़ाया। परन्तु अराजकता का प्रभाव बीकानेर पर भी पड़े बिना न रहा। राज्य के अनेक बड़े सरदारों तथा ठिकानेदारों ने पिंडारियों की सहायता से बलवे किये तथा लूट मार मचा दी। सम्भव था कि यह बलवा भीषण रूप धारण करता। लार्ड हेस्टिंग्ज़ ने राजपूताने के राजाओं की रक्षा के लिये उनसे मित्रता करली और अन्य राजाओं की भांति महाराज सूरतसिंहजी ने ९ मार्च सन् १८१८ई० को अंगरेज़ सरकार से स्थायी सन्धि करली। इसके अनुसार बीकानेर राज्य तथा बृटिश सरकार ने समय पर एक दूसरे को सहायता देने की प्रतिज्ञा की और यह स्वीकार किया कि एक के मित्र तथा शत्रु दूसरे के मित्र तथा शत्रु माने जायेंगे। बृटिश सरकार ने बीकानेर

राज्य की रक्षा करने की प्रतिज्ञा की और साथ ही उपद्रवी सरदारों के दमन के लिये सेना देने का बचन दिया। अंग्रेज़ सरकार की सहायता से ठाकुर का विद्रोह शीघ्र दमन कर दिया गया।

यह विद्रोह शान्त अवश्य कर दिया गया परन्तु ठाकुर तथा बड़े बड़े सरदार समय पर सिर उठाने के लिये सदा तैयार रहते थे। महाराजा रतनसिंहजी तथा महाराजा सरदारसिंहजी को इन विद्रोहों के कारण अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा परन्तु कठिनाई होते हुए भी सिक्खों की दूसरी लड़ाई में महाराजा रतनसिंहजी ने अंग्रेज़ों की मदद की। सन् १८५७ के गदर में तो महाराजा सरदार-सिंहजी स्वयं अपनी सेना सहित इनकी सहायता के लिये गये तथा हिसार, हांसी और जमालपुर में अपनी वीरता का परिचय देकर विद्रोहियों का दमन किया। महा-राजा की इस सहायता से अंग्रेज़ सेनापतियों ने महाराज की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। महारानी विक्टोरिया ने प्रसन्न होकर महाराजा को एक खरीता भेजा जिसमें महा-राजा की सहायता की पूर्ण प्रशंसा की।

पहले ही कहा जा चुका है कि महाराजा सरदारसिंह-जी के समय में राज्य की आन्तरिक अवस्था अच्छी नहीं थी। ठाकुर लोग अपनी शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे

थे। स्थान स्थान पर डाकू प्रबल हो रहे थे। राजकोष खाली था। राज्य पर ऋण हो गया था। महाराजा सरदार-सिंहजी के कोई पुत्र नहीं था। इसलिये उन्होंने अपने निकट सम्बन्धी महाराजा लालसिंहजी के पुत्र महाराजा डूंगरसिंहजी को गोद लिया। यह १६ मई सन् १८७२ ई० में सिंहासन पर विराजे। इनके सिंहासनारूढ़ होने के समय राज्य की आय कुल पाँच लाख रुपये रह गयी थी। सड़कों, स्कूलों और अस्पतालों का कहीं नाम भी नहीं था। महाराजा डूंगरसिंहजी ने अपने साहस, बुद्धिमत्ता तथा नीति से राज्य को इस शोचनीय अवस्था से बचाया।

महाराजा डूंगरसिंहजी की अवस्था कम होने के कारण राज्य का प्रबन्ध रिजेन्सी कौंसिल करती रही, परन्तु १८ वर्ष की अवस्था में महाराजा डूंगरसिंहजी ने राज की बाग-डोर अपने हाथों में ली और शासन-सुधार तथा प्रजा-हित के कार्य्य प्रारंभ कर किये। पुलिस विभाग का संठगन करके चोर तथा डाकुओं का नाश किया। न्यायालय स्थापित किये गये और नये नियम भी बने। ज़मीन का बन्दोबस्त आधुनिक ढंग से किया गया जिससे प्रजा को लाभ हो। अस्पताल तथा स्कूल स्थान स्थान पर स्थापित किये गये। बिजली का प्रयोग भी बीकानेर में महाराजा की कृपा से सन् १८८६ ई० में प्रारम्भ हो गया। इस समय तक

भारतवर्ष की अन्य किसी रियासत में बिजली का प्रयोग प्रारम्भ नहीं हुआ था।

महाराजा डूंगरसिंहजी बड़े दूरदर्शी शासक थे। उन्होंने अपनी प्रजा की भलाई के लिये राज्य में रेलवेलाइन और नहर बनवाने का भी बिचार किया और इस विषय में भारत सरकार को पत्र लिखा। महाराजा का प्रजा-प्रेम दो बातों से प्रकट होता है। पहली बात यह कि महाराजा ने सड़कों के किनारे वृक्ष लगवाये जिससे मनुष्यों तथा पशुओं को मरुभूमि की गरमी से शांति मिले। दूसरे, महाराजा ने बेगार की प्रथा बन्द करदी। इस प्रथा के अनुसार सरकारी कर्मचारी दौरे के समय गाँव वालों से बिना कुछ दिये काम लेते थे। अतः गरीब देहाती कष्ट पाते थे।

प्रजा-हितैषी होते हुये भी महाराजा डूंगरसिंहजी के हृदय पर एक दुःखद घटना का बहुत प्रभाव पड़ा। उसी के कारण असमय में १६ अगस्त १८८७ को ३३ वर्ष की अवस्था में उनका देहान्त हो गया। महाराजा के सुधारों से कई ठाकुर अधीर हो उठे। उन्हें यह भय हुआ कि वे मनमानी न कर सकेंगे। अतः कुछ ठाकुरों ने विद्रोह कर दिया। विद्रोह के दमन के लिये महारारजा ने अंग्रेज़ सरकार से सहायता माँगी। विद्रोह तो शान्त कर दिया गया परन्तु बृटिश सरकार ने महाराजा के कार्यों में हतस्तक्षेप

किया। इसका परिणाम बुरा हुआ क्योंकि ठाकुर लोग यह समझने लगे कि यदि हम विद्रोह करेंगे तो हमारा तो कुछ नहीं होगा और महाराजा के कार्यों में बृटिश सरकार हस्त-क्षेप करेगी। इस धारणा के कारण महाराजा गङ्गासिंह-जी के शासनकाल के प्रारम्भ में कुछ ठाकुरों ने फिर विद्रोह किया जिसका हाल हम आगे पढ़ेंगे।

चौथा पाठ

बाल्यकाल

महाराजा डूंगरसिंहजी के कोई पुत्र नहीं था। उन्हें इसकी चिन्ता सदा रहा करती थी कि उनके बाद उनका उत्तराधिकारी कौन होगा। जब यह ज्ञात हुआ कि महाराजा लालसिंहजी की दूसरी रानी गर्भवती है तो उन्हें तथा अन्य जनों को भी बड़ी प्रसन्नता हुई।

सन् १८८० ई० वि० संवत् १९३७ में विजय दशमी के दिन प्रातःकाल साढ़े दस बजे महाराजा गंगासिंहजी का जन्म हुआ। सब हिंदू विशेषतः क्षत्रिय विजय दशमी को शुभ दिन मानते हैं, क्योंकि इसी दिन श्रीरामचन्द्र जी ने अपनी विजय का उत्सव मनाया था। ज्योतिषियों ने बताया कि नवजात बालक बड़ा प्रतापी राजा होगा।

महाराजा लालसिंहजी बड़े बुद्धिमान तथा गुणज्ञ थे। उनके धार्मिक जीवन तथा दयालुता के कारण लोग उनका बहुत आदर और सम्मान करते थे। अपने बड़े पुत्र महाराजा डूंगरसिंहजी के राजत्व काल के प्रारम्भ में इनका शासन प्रबन्ध से घनिष्ट सम्बन्ध था। आप चार वर्षों तक स्टेट कौंसिल के सभापति रह चुके थे और महाराजा डूंगर-

सिंहजी का प्रत्येक सुधार कार्य आपकी सलाह से किया जाता था। यह उदार, चतुर और दयालु थे तथा जनता के स्नेह पात्र थे।

बाल्य-काल से ही महाराजा गंगासिंहजी का लालन पालन इनके माता पिता ने महलों में प्रेम-पूर्वक किया था। महाराजा डूंगरसिंहजी स्वयं इस ओर विशेष ध्यान रखते थे। परन्तु महाराजा गंगासिंहजी बाल्यावस्था का सुख अधिक दिनों तक न उठा सके। एक दिन सायंकाल यह अपने साथियों सहित गढ़ के छायादार मैदान में खेल रहे थे। अगस्त का महीना था। महाराजा गंगासिंहजी की अवस्था इस समय केवल ७ वर्ष की थी। एकाएक दो वृद्ध सरदार गम्भीरता पूर्वक महाराजा तथा उनके साथियों की ओर आते हुए दिखाई दिये। उन वृद्ध सरदारों की उदास मुखमुद्रा देखकर महाराजा रन्त समझ गये कि कोई अशुभ समाचार है, महाराजा डूंगरसिंहजी का देहान्त हो चुका था। वृद्ध सभासद छोटे बालक महाराजा गंगासिंहजी को महलों में ले गये, वहां उन्होंने शोक वस्त्र पहने।

इस प्रकार केवल सात वर्ष की अवस्था में महाराजा गंगासिंहजी बीकानेर राज्य के शासक घोषित किये गये। तेरह दिन समाप्त हो जाने पर ३१ अगस्त सन् १८८७ ई० को महाराजा गंगासिंहजी राज्य के बड़े बड़े सरदारों तथा

अफसरों के सन्मुख पूर्वजों की गद्दी पर विराजे।

हिन्दू राजा का सिंहासन ग्रहण करना एक धार्मिक कार्य है। राजा ईश्वर का अवतार माना जाता है। इस सिंहासन पर बैठने से पहले श्री गणेश जी की पूजा होती है। पूजा तथा अन्य धार्मिक कार्य समाप्त हो जाने पर महाराजा राजसी वस्त्र पहन कर अपने पूर्वजों के सिंहासन के सम्मुख आते हैं। तीन बार सिंहासन को प्रणाम करते हैं। सिंहासन के बाईं तथा दाहिनी ओर बीकानेर राज्यके प्रधान राजपूत सरदार खड़े रहते हैं। महाराजा सिंहासन को प्रणाम करने के बाद इन सरदारों की ओर देखते हैं। ये चारों सरदार फिर नये महाराजा से प्रार्थना करते हैं कि आप पर ईश्वर की असीम कृपा है और राज्य तथा राज्य कुल के देवताओं का अनुग्रह है। आप सिंहासन पर विराजिये।

इसी प्रणाली से महाराजा गंगासिंहजी का राज्याभिषेक संस्कार हुआ। सिंहासन पर बैठते ही १२१ तोपों की सलामी हुई। नौबत खाने में बाजे बजने लगे और राजतिलक प्रारम्भ हुआ। सर्व प्रथम सेखसर के चौधरी ने महाराजा के मस्तक पर तिलक लगाया। यह उस गोदारा जाट का वंशज था जिसने राव बीकाजी की अधीनता स्वीकार कर ली थी और उस के बदले में बीकानेर नरेश

को राजतिलक करने का अधिकार प्राप्त किया था। जब चौधरी ने तिलक लगा लिया तो राज्य के चार प्रधान राजपूत सरदारों ने बारी २ महाराजा के मस्तक पर तिलक लगाया। इन सरदारों में महाजन के राजा ने सबसे पहले तिलक लगाया। यह बीकाजी के वंशज हैं और राज्य के सबसे बड़े सरदार हैं। दूसरे तिलक करने वाले सरदार बीदासर के ठाकुर थे। यह राव बीकाजी के छोटे भाई राव बीदाजी के वंशज हैं। तीसरे सरदार रावतसर के रावत थे। यह राव कांधलजी के वंशज हैं। इनका पद बीदासर के ठाकुर के समान ही है। महाराजा के मस्तक पर चौथे तिलक लगाने वाले सरदार भूकरका के ठाकुर थे। राजा महाजन की तरह भूकरका के ठाकुर भी राव बीका-जी के वंशज हैं। चारों सरदारों के तिलक लगा लेने पर बेलासर के शानी पड़िहार ने तिलक लगाया। यह बेला-जी के वंशज हैं जो बीकाजी के अस्तबल के अफ़सर थे। राजतिलक समाप्त हो जाने पर छत्र, चँवर, सिंहासन तथा अन्य राज्य चिन्हों की पूजा की गई। इसके पश्चात् लड़ाई के शस्त्र इत्यादि तथा घोड़ा, हाथी, नगारा और उन सब चीज़ों की पूजा हुई जो युद्ध में क्षत्रियों के काम आती है। फिर गुसाईं जी ने तिलक किया और राज्य के टीकाई पुरोहित ने आरती की। धार्मिक कृत्यों के समाप्त

होने पर उपस्थित अफसरों तथा सरदरोंने महाराजा को नज़र दी और मुजरा किया।

महाराजा लालसिंहजी ने अपने द्वितीय पुत्र को सिंहासनारूढ़ होते देखा। परन्तु उनका स्वास्थ्य धीरे धीरे बिगड़ता जाता था और वह अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहे। महाराजा गंगासिंहजी के गद्दी पर बैठने के १५ दिन बाद, १६ सितम्बर सन् १८८७ ई. को महाराजा लालसिंहजी इस असार संसार को छोड़ कर चल दिये। बालक नरेश के लिये यह बहुत दुःख की बात थी। शासन के आरम्भ में ही वह अपने पिता की प्रेमपूर्ण सलाह से वंचित रह गये। अपने पूज्य पिता की पवित्र स्मृति महाराजा को अब तक है।

पांचवां पाठ

शिक्षा तथा रिजेन्सी कौंसिल के सुधार

सिंहासन पर बैठने के ससय महाराजा गंगासिंहजी की अवस्था केवल सात वर्ष की थी। इसलिये शासन-प्रबन्ध रिजेन्सी कौंसिल को सौंपा गया। जब किसी रियासत का शासक नाबालिग़ होता है तो भारत सरकार उसके राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लेती है तथा एक शासन-समिति स्थापित कर देती है। यह समिति राज-कार्य सँभालती और बालक शासक की शिक्षा का उचित प्रबन्ध करती है। इसी शासन-समिति को रिजेन्सी कौंसिल कहते हैं। प्रारम्भ में भारत-सरकार ने यह प्रथा केवल इसलिये चलाई थी कि शासक की नाबालगी में राज-कार्य में किसी प्रकार की त्रुटि न होने पाये। परन्तु धीरे धीरे इस प्रथा में कुछ दोष आ गये। रिजेन्सी कौंसिल ने रियासत के पुराने नियम और रीति रवाज बदल दिये। यह परिवर्तन रियासत के लिये लाभकारी नहीं सिद्ध हुआ महाराजा गंगासिंहजी को राज प्रबन्ध अपने हाथों में लेने पर रिजेन्सी कौंसिल के प्रबन्ध के कारण उत्पन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इसका हाल हम आगे पढ़ेंगे।

सब से पहले रिजेन्सी कौंसिल ने महाराजा की शिक्षा का प्रबन्ध किया। प्रारम्भ में रायसाहब पं० रामचन्द्र दूबे महाराजा के अध्यापक नियुक्त हुये। लगभग दो वर्षों तक महाराजा ने बीकानेर में ही शिक्षा पाई। बचपन से ही महाराजा की बुद्धि तीव्र थी। साधारण पढ़ाई के साथ साथ महाराजा को सैनिक शिक्षा भी दी जाती थी। ९ वर्ष की अवस्था में भारत सरकार ने शिक्षा के लिये महाराजा को मेयो कालेज, अजमेर में भेजा। यहां पर आपने पाँच वर्ष तक शिक्षा प्राप्त की।

कॉलेज में महाराजा गंगासिंहजी पढ़ने में बहुत तेज़ थे। यह अंग्रेज़ी में सदा सर्व-प्रथम रहते थे। अन्य विषयों में लगभग प्रत्येक क्लास में भी आपका सर्वोच्च स्थान रहता था। मेयो कालेज के छात्रों को प्रति वर्ष अंग्रेज़ी कविता कंठ करके सुनानी पड़ती थी, इसमें आप सदा सर्व-प्रथम रहते थे सन् १८९५ ई० में १४ वर्ष को अवस्था में महाराजा गंगासिंहजी ने मेयो कालेज की पढ़ाई समाप्त की।

राजपूत शासक के लिये सैनिक शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त कुछ ही वर्षों में महाराजा राज्य-प्रबन्ध अपने हाथ में लेने वाले थे, अतः शासन प्रबन्ध का ज्ञान और दफ्तरों के कार्य का अनुभव भी आवश्यक था। इसलिये भारत सरकार ने महाराजा की

शिक्षा के लिये सर ब्रायन इजरटन, के. सी. आई. ई., को नियुक्त किया। इजरटन साहब चतुर और सहृदय मनुष्य थे। इनकी सुशीलता, सद्व्यहार और सहानुभूति के कारण महाराजा बहुत प्रभावित हुये। इनकी अध्यक्षता में आप पढ़ाई, घोड़े की सवारी तथा अन्य खेल इत्यादि में शीघ्र ही दक्ष हो गये।

महाराजा ने शासन-प्रबन्ध का कार्य भी सर ब्रायन की अध्यक्षता में सीखा। इस समय महाराजा ने गम्भीरता पूर्वक प्रधान दफ्तरों की फाइलों का तथा रिजेन्सी कौंसिल के कार्य का अध्ययन किया। इन कार्यों के साथ साथ महाराजा की सैनिक शिक्षा जारी थी। सैनिक शिक्षा की ओर भी महाराज की विशेष दिलचस्पी थी। बीकानेर की सेना उस समय आज कल की भांति संगठित नहीं थी। इसलिये पूर्ण सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये महाराजा गंगासिंहजी देवली गये, और शिक्षा प्राप्त करके बीकानेर लौटनेपर इनकी अध्यक्षता में सेना पूर्ण दक्ष हो गई।

राव बीकाजी के समय से ही बीकानेर और जोधपुर राज्यों में बराबर युद्ध हुआ करते थे। यह एक महत्व की घटना थी कि जोधपुर नरेश महाराजा जसवंतसिंहजी तथा बीकानेर नरेश महाराजा गंगासिंहजी के कारण यह पैतृक वैमनस्य सदा के लिये समाप्त हो गया।

सन् १८९६ ई० में वाइसराय लॉर्ड एलगिन बीकानेर आये। इसके पहले रेलगाड़ी न होने के कारण कोई वाइसराय बीकानेर नहीं आया था। इसलिए लॉर्ड एलगिन का आना एक महत्व की बात थी। वाइसराय का स्वागत बड़े समारोह से हुआ। महाराजा के राज्योचित गुणों से लॉर्ड एलगिन बहुत प्रभावित हुए और अपने भाषण में महाराजा की बहुत प्रशंसा की।

अब महाराजा विवाह के योग्य होगये थे। रिजेंसी कौंसिल ने राजमाता की सलाह से प्रतापगढ़ की राजकुमारी से महाराजा का विवाह करने का निश्चय किया। ७ जुलाई सन् १८९७ ई० को बड़ी धूमधाम से महाराजा का विवाह हुआ।

महाराजा गङ्गासिंहजी की बाल्यावस्था में रिजेंसी ने राज्य में अनेक सुधार किये। कौंसिल ने मालगुज़ारी का फिर से प्रबन्ध किया। खालसा गाँवों की मालगुज़ारी भी निश्चित कर दीगई। सन् १८९४ ई० में कोर्ट आफ वार्ड्स विभाग स्थापित हुआ, जिसका काम नाबालिग जागीरदारों की जागीर का प्रबन्ध करना था। लगभग ९० मील लम्बी रेलवे लाइन भी रिजेन्सी कौंसिल ने बनवाई। न्याय विभाग में सुधार किया गया और योग्य तथा अनुभवी अफसर नियुक्त हुए। महाराजा गङ्गासिंहजी

की इच्छा के अनुसार कौंसिल ने एक नया महल बनवाना प्रारंभ किया। बीकानेर के किले में अनेकों महल हैं जो कला की दृष्टि से बहुत अच्छे हैं परन्तु आधुनिक ढङ्ग से नहीं बने हैं। इसलिए लालगढ़ महल का निर्माण प्रारंभ हुआ इसका नकशा सर स्विंटन जेकब ने तैयार किया था। यह महल लाल पत्थर का बना है। इसमें बहुत सुन्दर चित्रकला और कारीगरी दिखलाई गई है। इस महल के बनाने का सारा कार्य बीकानेर के कारीगरों ने ही किया है।

रिजेन्सी कौंसिल ने अच्छे अच्छे सुधार किये परन्तु कुछ दोषपूर्ण कार्य भी हैं जिनके कारण महाराजा गङ्गासिंहजी को आगे चलकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कौंसिल ने राज्य में सिक्का ढालने का अधिकार भारत सरकार को देदिया। इसके अतिरिक्त कौंसिल ने अफसरों की सुविधा के लिये दफ़्दरों में हिंदीके स्थान पर उर्दू का प्रचार किया और इस विषय में प्रजा की कठिनाइयों की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। कौंसिल ने राजकोष बढ़ाने का प्रयत्न नहीं किया। प्रजा के स्वास्थ्य और शिक्षा की ओर भी विशेष ध्यान नहीं दिया। सबसे बड़ी भूल जो रिजेंसी कौंसिल ने की वह महाराजा और जागीदारों के सम्बन्ध के विषय में थी। इसके कारण भविष्य में कठिनाइयाँ उपस्थित हुईं।

छठा पाठ

दो शब्द

सर ब्रायन जर्ट, के. सी. आई. ई., महाराजा के कई वर्षों तक अध्यापक रहे। वह महाराजा के व्यक्तित्व तथा प्रारम्भिक जीवन-निर्माण के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखते हैं

"इङ्गलैंड में अपनी छुट्टियाँ व्यतीत करके सन् १८९५ ई० में मई के महीने में एकदिन प्रातःकाल मैं माउंट आबू पहुँचा। वहाँ बीकानेर के महाराजा श्री गङ्गासिंहजी ने मेरा हार्दिक स्वागत किया। आपकी अवस्था इस समय केवल १४ वर्ष की थी और मैं आपका शिक्षक तथा अभिभावक नियुक्त हुआ।

"उस समय जिस मित्रता का सूत्रपात हुआ उस मित्रता को महाराजा साहब ने आज तक पूर्णतया निभाते हुए मुझे बहुत सम्मानित किया है।

"महाराजा ने मेयो कालेज में शिक्षा पाई थी। १८९४ ई० में आप कालेज से चले आये। पं० रामचन्द्र दूबे आप के शिक्षक नियुक्त हुए। इन्होंने महाराजा की शिक्षा तथा उन्नति की ओर जिस तत्परता से ध्यान दिया वह अत्यंत प्रशंनीय है। इस थोड़ी अवस्था में महाराजा साहब

आश्चर्यजनक सरलता से अंग्रेज़ी बोलते थे। मेरे आने के कुछ समय पहले तक मिस्टर बेली बीकानेर मेंरेज़िडेन्ट थे जो बाद में सर चार्ल्स बेली के नाम से प्रसिद्ध हुए। मिस्टर बेली के बच्चों से महाराजा साहब बहुत अधिक मिलते थे। कदाचित इसी का यह परिणाम था कि इस थोड़ी सी अवस्था में ही महाराजा साहब आश्चर्यजनक निपुणता के साथ अच्छी अंग्रेज़ी बोलने लगे थे।

कुछ राजकुमारों ने मुझसे कहा था कि महाराजा का ध्यान घोड़े की सवारी की ओर कम है तथा खेल इत्यादि में भी आपकी अधिक रुचि नहीं है। मैंने आप को शिकार पोलो तथा अन्य खेलों के प्रति तत्पर पाया। घोड़े की सवारी के तरफ आपका ध्यान अधिक आकर्षित नहीं हुआ था क्योंकि आपको ठीक ठीक घोड़ेकी सवारी करना नहीं सिखाया गया था। परन्तु शीघ्र ही घोड़े की सवारी के प्रति आप की रुचि बढ़ गई।

उस समय जोधपुर, कोटा तथा अलवर के नाबालिग शासक माउण्ट आबू में थे। इन शासकों की उपस्थिति के कारण जितनी दावतें तथा उत्सव माउण्ट आबू में होते थे उन सब में बीकानेर नरेश भाग लेते थे तथा बीकानेर भवन में आपने स्वयं अनेकों दावतें कीं।

जुलाई में बीकानेर वापिस लौटने पर महाराजा गढ़

में रहने लगे और मैं भी वहीं रहने लगा। इसी स्थान पर आपकी वास्तविक शिक्षा प्रारम्भ हुई।

महाराजा अपनी पढ़ाई में परिश्रम करने के अतिरिक्त दूसरे कार्य्यों में भी कुशल थे। आपका दैनिक कार्य्य-क्रम इस प्रकार था:—

प्रातःकाल जलपान से पहले घोड़े की सवारी तथा निशानेबाज़ी समाप्त करना, सुबह तथा तीसरे पहर अध्ययन करना, सायंकाल पोलो खेलना। कुछ समय पश्चात् अन्त में स्केटिंग होती थी। छुट्टियों के दिन आप घोड़े पर अठारह मील की दूरी पर गजनेर जाते थे, वहाँ सूअर का शिकार करते थे और सायंकाल पोलो खेलने के समय तक फिर घोड़े ही से वापिस आ जाते थे।

इस समय आप की शिक्षा स्कूलों की शिक्षा-पद्धति के सिद्धान्तों के अनुसार ही थी। समय समय पर राज्य के भिन्न भिन्न भागों में दौरा करना, शासन-सम्बन्धी बातों का ज्ञान प्राप्त करना, सेना की ओर ध्यान देना; सरदारों तथा जागीरदारों से मिलना एवं धार्मिक तथा राजसी उत्सवों में भाग लेना भी इनकी शिक्षा में सम्मिलित था।

१८९६ ई० में यह निश्चय हुआ कि उत्तरी भारत में शिक्षोन्नति के लिये यात्रा की जाय। अतः महाराजा साहब, महराजा भैरूसिंह, पं० रामचन्द्र दूबे, मैं तथा महाराजा

साहब के दो साथी लाहौर, दिल्ली, आगरा, अमृतसर, कानपुर लखनऊ, कलकत्ता, दार्जिलिंग गये। लौटते समय हम लोग बनारस रुके। महाराजा बनारस ने बड़गंगा तथा बनारस में आखेट का प्रबन्ध किया था। इस आखेट में अच्छा मनोरंजन हुआ।

कलकत्ता पहुँचने पर मारवाड़ी समाज ने महाराजा का बड़े समारोह से स्वागत किया। वाइसराय ने भी आपका स्वागत किया। कलकत्ते के मैदान में पोलो में भी आपने भाग लिया।

अगले तीन वर्ष तक महाराजा की शिक्षा उच्चकोटि की हुई। इस समय में राज्य के प्रत्येक विभाग का पूर्ण अध्ययन किया गया। रेज़िडेन्ट के साथ महाराजा साहब शासन-समिति (कौंसिल) की बैठक में जाते थे। राज्य के प्रत्येक भाग में आपने दौरा किया तथा माल-विभाग एवं सर्वे का आपने ज्ञान प्राप्त किया।

आपने इस शिक्षा-समय में देवली, बूँदी, कोटा, अलवर तथा प्रतापगढ़ इत्यादि स्थानों का भ्रमण किया। देवली में पहले पहल आपने शेर का शिकार किया। प्रति वर्ष मई तथा जून में आप आबू जाते थे। वहाँ आपकी पोलो-टीम ने प्रतियोगिताओं (मैचों) में भी भाग लिया और सफलता प्राप्त की। आबू पर्वत पर बीकानेर-भवन

में राजकुमारों, सरकारी अफ़सरों तथा महाराजा के मित्रों का पूर्ण स्वागत होता था।

१६ दिसम्बर १८९८ ई० को वाइसराय ने महाराजा साहब को पूर्ण राज्याधिकार प्रदान किये। उसके कुछ समय बाद मैंने बीकानेर से विदा ली।

मैं कुछ वर्षों तक महाराजा का अध्यापक रहा। इस समय महाराजा बढ़ कर लम्बे कद के तेजस्वी नवयुवक हो गये एवं पोलो के दक्ष खिलाड़ी, अनुपम निशानेबाज़ तथा सूअर के शिकार और अतिथि-सत्कार में प्रवीण हो गये। सूअर के शिकार में एक बार आप की हँसली की हड्डी भी टूट गई थी।

अपनी शिक्षा में महाराजा अत्यधिक प्रयत्नशील रहते थे। आपका ध्यान राज्य की भलाई की तरफ़ रहता था। शासन-सम्बन्धी साधारण ज्ञान प्राप्त करने का आप सदा प्रयत्न करते थे। अपने राज्य में नहर बनवाने का आपने पूर्ण निश्चय कर लिया था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि आप किस प्रकार पच्चीस वर्षों तक लगातार कठिन परिश्रम करने के पश्चात् नहर बनवाने में सफलीभूत हुये। इसी प्रकार प्रारम्भ से ही आपने राज्य के प्रत्येक भाग में रेल बनवाने का निश्चय कर लिया था। लालगढ़ का सुन्दर महल बनवाने के लिये उपयुक्त स्थान तथा नकशा

भी आपकी इच्छानुसार निश्चित हो चुका था।

आजकल की भाँति प्रारम्भ से ही आपने अपने मित्रों के प्रति पूर्णप्रेम तथा बृटिश सम्राट् के प्रति भक्ति प्रदर्शित की है।

इस स्थान पर मैं महाराजा की पूज्य माता स्वर्गीया माजी साहिबा की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा में दो शब्द लिखना आवश्यक समझता हूँ। आपने अपने पुत्र-प्रेम को महाराजा की शिक्षोन्नति में बाधक नहीं होने दिया। एवं आप सदा उन योजनाओं का समर्थन करती थीं जो महाराजा की भलाई तथा उन्नति के लिये होती थीं।

सातवां पाठ

शासनाधिकार और प्रजा पालन

यद्यपि महाराजा गंगासिंहजी सात वर्ष की अवस्था में सिंहासन पर बैठ गये थे, परन्तु नाबालिग़ रहने के कारण शासन-कार्य रिजेन्सी-कौंसिल के आधीन रहा। उसके ११ वर्ष बाद जब आप १८ वर्ष के हुए तो वाइसराय ने अपने एजेन्ट सर आर्थर मारटिंडेल के हाथ एक ख़रीता भेजा जिसके अनुसार आपको १६ दिसम्बर सन् १८९८ ई० को पूर्ण शासनाधिकार प्राप्त हुआ। ऐसे अवसरों पर महान उत्सव मनाया जाता है इसलिये बीकानेर के क़िले में एक शानदार दरबार हुआ। इस दरबार में राज्य के सब मुख्य मुख्य सरदार, अफ़सर और रिजेन्सी-कौंसिल के सदस्य उपस्थित थे। भरे दरबार में सर आर्थर मारटिंडेल ने वाइसराय का ख़रीता पढ़ कर सुनाया और अपनी ओर से भी महाराजा को सलाह दी।

यह दिवस बीकानेर राज्य के लिये बड़े महत्व का था। महाराजा के बाल्यावस्था में अफ़सरों में गुटबन्दी हो गई थी, जिसके कारण हानि की सम्भावना थी। महाराजा गंगासिंहजी ने राज्य की बागडोर हाथ में लेते ही सब को

यह बता देना आवश्यक समझा कि वह केवल नाम-मात्र के शासक नहीं हैं, वरन् प्रजा तथा राज्य की भलाई के लिये सदा प्रस्तुत हैं। उसी दिन आपने एक अलग दरबार किया। उसमें भाषण देते हुए महाराजा ने कहा कि भविष्य में वे सब दोष और दलबंदी दूर हो जानी चाहिए जो रिजेन्सी-कौंसिल के समय में फैल रही थी। आपने अपने भाषण में घूसखोरी के दोष की ओर सब का ध्यान दिलाते हुए कहा कि "प्रजा को यह स्पष्टरूप से जान लेना चाहिए कि भविष्य में न कोई किसी को घूस दे और न कोई किसी से घूस ले। यदि प्रजा के साथ कोई राज्य का कर्मचारी बुरा व्यवहार करे तो प्रजा इस विषय में मुझसे प्रार्थना कर सकती है। परन्तु किसी भी राज कर्मचारी को, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, घूस नहीं देनी चाहिये।"

एक अट्ठारह वर्ष के नवयुवक के मुख से यह आश्चर्यजनक घोषणा मालूम होती थी परन्तु इस घोषणा से बड़े बड़े सरदारों और अफ़सरों को यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हो गया कि महाराजा गंगासिंहजी उन शासकों में से नहीं हैं जो राज्य-प्रबन्ध की ओर ध्यान नहीं देते। उन दिनों बड़े बड़े अफ़सर तथा सरदार गण अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए रनिवास में सिफ़ारिश पहुँचाते थे। आपने अपनी पूज्य माता की अनुमति से दरबार में यह घोषणा की कि

भविष्य में कोई व्यक्ति इस प्रकार सिफ़ारिश पहुँचाने का प्रयत्न न करे।

महाराजा गंगासिंहजी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना था। यह भलीभाँति जान गये थे कि शासक का काम पोलो और शिकार खेलना अथवा दावतों में सम्मिलित होना ही नहीं है। शासक को अपनी प्रजा के हित का ध्यान रखना चाहिये। इसी समय भारत-वर्ष में और मुख्य कर बीकानेर राज्य में एक ऐसी घटना हुई जिसके कारण आप पूर्ण रूप से प्रजा के उपकार में लग गये। सन् १८९९ ई० संवत् १९५६ वि० में प्रजा को भीषण अकाल का सामना करना पड़ा जो राज में 'छपनाकाल' के नाम से प्रसिद्ध है। गत ५० वर्षों में बीकानेर में अनेकों दुर्भिक्ष पड़े थे। रिजेंसी-कौंसिल के समय में भी दो दुर्भिक्ष पड़े थे। कौंसिल ने यथाशक्ति अकाल पीड़ितों की सहायता की थी। इसके कारण राज-कोष में धन का अभाव था क्योंकि बहुत सा लगान प्रजा को माफ़ कर दिया गया था।

दुर्भिक्ष ईश्वरीय प्रकोप है। भारत सरकार ने कटु अनुभव के बाद दुर्भिक्ष के समय अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये एक पूरी योजना तैयार की थी। परन्तु रियासतों में उस समय तक कोई ऐसा प्रबन्ध नहीं था।

बीकानेर राज्य भी इसके लिये तैयार न था और इससे पहिले वर्ष के अकाल के कारण पानी, अनाज, चारे इत्यादि का बिलकुल प्रबन्ध न था। अतः दुर्भिक्ष के प्रारम्भ में अत्यधिक गर्मी तथा पशुओं के लिये चारे और पानी की कमी, के कारण स्थान स्थान पर पशु और मनुष्य मरने लगे।

महाराजा साहब की अवस्था उस समय केवल १८ वर्ष की थी, परन्तु यह तन मन धन से जनता का कष्ट दूर करने में लग गये। इन्होंने अपनी देखरेख में अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये स्थान स्थान पर कमेटियाँ स्थापित कीं। सब से बड़ा अकाल पीड़ित स्थानों पर अनाज पहुँचाना था। रेलगाड़ी की कमी और अच्छी सड़कों के न होने के कारण यह कार्य और भी कठिन था। परन्तु राव बीकाजी के वंशज महाराजा गंगासिंहजी कठिनाइयों से घबराये नहीं। इन्होंने अपनी संगठित सेना की सहायता से अकाल पीड़ित स्थानों में अनाज भेजकर अपनी प्यारी प्रजा की रक्षा की। दूसरा मुख्य जनता की सहायता के लिये ऐसे काम प्रारम्भ करना था जिनसे दुखी मनुष्य अपने जीवन-निर्वाह के लिये पैसे पैदा कर सकें और साथ ही राज्य को भी सदा लाभकारी हो। इस विचार से "शहर पनाह" अर्थात् बीकानेर शहर के चारों ओर

दीवार अधिक लंबी बनवाई गई जिससे लगभग ७४०००० वर्ग गज़ ज़मीन घेरी गई। यह ज़मीन बाद में खरीददारों को बेच दी गई और अब यहाँ मकान बन गये हैं।

इस समय हैज़ा तथा चेचक इत्यादि महामारियां भी फैल गईं। इनके कारण बहुत लोग मर गये। महाराजा ने इस ओर भी ध्यान दिया। स्थान स्थान पर अस्पताल खोले गये, जिनमें योग्य डाक्टर नियुक्त हुये। प्रत्येक गाँव में कम्पाउंडर भेजे गये और जनता को दवाई बाँटी गई। महाराजा गंगासिंहजी स्वयं भिन्न भिन्न गाँवों और तहसीलों में गये तथा प्रजा के दुःख को दूर करने का प्रयत्न किया। राजपूताना प्रान्त में दुर्भिक्ष का प्रबन्ध करने के लिये भारत सरकार की ओर से कर्नल डनलप स्मिथ नियुक्त हुए थे। इन्होंने महाराजा के अदम्य उत्साह एवं प्रजाहित के कार्यों की अत्यन्त सराहना की। भारत सरकार ने भी इनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। महारानी विक्टोरिया ने प्रसन्न होकर 'कैसरे हिन्द' स्वर्ण पदक इनको दिया।

अपने अनुभव से लाभ उठाने के लिए भविष्य में दुर्भिक्ष के समय पीड़ितों की सहायता के लिये इन्होंने योजना बनाई। इस सम्बन्ध में नये नियम भी बनाये। इन्होंने यह निश्चय कर लिया कि दुर्भिक्ष भगानेके लिए दो

बातों की मुख्य आवश्यकता है। एक तो राज्य में रेलवे लाइन की वृद्धि जिसके कारण प्रत्येक स्थान स्टेशन से निकट होजाये। दूसरे खेतों की सिंचाई का प्रबन्ध। रेल के होजाने से दुर्भिक्ष के समय भारत के अन्य प्रान्तों से अनाज मंगाकर जनता की प्राण-रक्षा की जा सकती है। सिंचाई का प्रबन्ध होजाने से काश्तकारों को अपनी फ़सल के लिये वर्षा पर निर्भर नहीं होना पड़ेगा। इस सम्बन्ध में महाराजा ने जो प्रशंसनीय प्रयत्न किये हैं उनके विषय में हम आगे पढ़ेंगे।

प्रजा हितैषिता के कारण यह प्रजा में बहुत प्रसिद्ध हो गये। शीघ्र ही एक ऐसा अवसर भी आया जिस पर इन्होंने अपनी वीरता का परिचय दिया और सम्राट के कृपा-भाजन बने। चीनियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी थी। इस लड़ाई में भारतीय सेना भेजी गई। महाराजा गङ्गासिंहजी इस युद्ध में अपने गङ्गा-रिसाले सहित गये। वहां इन्होंने अनेक वीरता के कार्य किये जिससे भारत में वापिस लौटने पर ब्रिटिश अधिकारियों ने बड़े समारोह से इनका स्वागत किया।

इनके चीन से लौटने के कुछ समय बाद सम्राट् एडवर्ड सप्तम का राज्याभिषेक लन्दन नगर में बड़े समारोह के साथ मनाया जाने वाला था। भारतीय-नरेशों के

प्रतिनिधि होकर लन्दन जाने के लिये सम्राट् की ओर से इनको निमन्त्रण मिला। इन्होंने निमंत्रण स्वीकार किया और लंदन पहुँचने पर इङ्गलैंड सरकार के अतिथि बने। लंदन में प्रत्येक स्थान पर इनका बड़े उत्साह और समारोह से स्वागत हुआ। इनके व्यक्तित्व और सद्व्यवहार के कारण वहाँ लोग बहुत प्रभावित हुए। सम्राट् तथा सम्राज्ञी भी इनसे अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रत्येक अवसर पर इन्हें निमन्त्रण दिया और राज-कुटुम्ब के सदस्यों के साथ इनको बैठक दी।

इस अवसर से महाराजा साहब को यह विशेष सम्मान प्राप्त हुआ कि वे प्रिन्स ऑफ वेल्स (जो पश्चात् सम्राट् जॉर्ज पंचम् के नाम से प्रसिद्ध हुये) के आनरेरी ए. डी. सी. नियुक्त हुये और इस उच्च एंव सम्मानित पद पर १६३६ ई० तक सम्राट् के स्वर्गवास होने तक रहे।

इस इंगलैंड यात्रा से महाराजा ने अनेक अनुभव प्राप्त किये। वहाँ शासन-प्रणाली तथा सुव्यवस्था को देख कर आपने यह जान लिया कि अपने राज्य में अभी कितना कार्य करना है। अपने इस अनुभव के कारण इन्होंने अपनी राजधानी को सुन्दर बनाया। यहाँ चौड़ी सड़कें बनवाई जिनके दोनों ओर छायादार वृक्ष लगे हैं। मनोहर उद्यान बनवाए और सुन्दर महलों का निर्माण किया।

आठवाँ पाठ

प्रारम्भिक-सुधार

सम्राट् एडवर्ड सप्तम के राज्यभिषेकोत्सव से लौटने पर महाराजा गंगासिंहजी ने शासन-सुधार का काम प्रारंभ किया। अब तक शासन-कार्य रिजेन्सी-कौंसिल के बनाये हुए नियमों के अनुसार चल रहा था। शासन की बाग-डोर अपने हाथोंमें लेनेपर इन्होंने इस प्रणाली में केवल एक परिवर्तन किया था। वह परिवर्तन प्रधान-मंत्री के पद की स्थापना थी। रिजेन्सी-कौंसिल बदल कर स्टेट-कौंसिल बना दी गई और वही संस्था पूर्ववत् अपना काम करती रही। कौंसिल के सदस्यों के अधिकार भी ज्यों के त्यों बने रहे। इस कौंसिल का दफ्तर महाराजा साहब के निजि दफ्तर से अलग था। परन्तु यह प्रणाली उपयुक्त सिद्ध नहीं हुई।

महाराजा साहब प्रारंभ से ही यह जान गये थे कि पुरानी प्रणाली के अनुसार कार्य्य संचालन करने से राज्य प्रगतिशील नहीं बन सकता। यह समझ गये थे कि राज्य की उन्नति के लिये पुरानी राज्य-प्रणाली में उचित परिवर्तन की आवश्यकता है। पुरानी प्रणाली के दोष

दिखाते हुए इन्होंने एक बार लिखा था कि—"दीवान या मेम्बर कौंसिल के अधिकारों की व्याख्या नहीं कीगई है जिससे कभी कभी बहुत महत्व के कार्य्य अफसर स्वयं कर डालते हैं और कभी बहुत साधारण मामला पूरी कौंसिल के सम्मुख अथवा मेरे सम्मुख पेश किया जाता है।...इसका परिणाम यह होता है। कि लोग अधिक से अधिक अपनी ज़िम्मेवारी टालने का प्रयत्न करते हैं।"

तीन प्रधान कारणों से महाराजा साहब पुरानी प्रणाली में परिवर्तन करके नया प्रबन्ध स्थापित करना चाहते थे। रिजेन्सी-कौंसिल की योजनानुसार इन्हें भी प्रधान-मंत्री की तरह कई विभागों का कार्य्य-संचालन करना पड़ता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इनको विशेष महत्व की बातों की तरफ ध्यान देने का समय नहीं मिलता था। इसलिये सर्व-प्रथम ये अपने लिये अवकाश निकालना चाहते थे, जिसमें प्रजाहित की योजनाओं को सोचने और इनको सफल बनाने का प्रयत्न करें तथा राज्य-व्यवस्था की उचित नीति निर्धारित करें। दूसरे महकमों का संगठन इस प्रकार करना चाहते थे कि प्रत्येक महकमा एक सेक्रेटरी की अध्यक्षता में रहे और सेक्रेटरी महाराजा की आज्ञानुसार कार्य्य करते रहें। तीसरे, इनकी इच्छा थी कि सेक्रिटेरियेट केवल नियमित

कार्य्य करने के दफ्तर ही न हों वरन् राज्य की नीति निर्धारित और पालन करने का भी द्वार हो। इन सब का तात्पर्य यह था कि शासक प्रत्येक विभाग का निरीक्षण कर सके और सब पर नियन्त्रण कर सके।

नये प्रबन्ध में सारा राज-कार्य पाँच विभागों में बांट दिया गया। प्रत्येक विभाग का कार्य्य एक सेक्रेटरी को सौंप दिया गया। महकमा खास की स्थापना की गई। प्रधान-मंत्री का स्थान तोड़ दिया गया। इसमें यह लाभ हुआ कि अन्य मंत्री शासक के अधिक सन्निकट आगये। इस विषय में पोलिटिकल एजेंट महाराजा साहब से सहमत नहीं था। वह प्रधान-मन्त्री का स्थान तोड़ने के पक्ष में नहीं था। इस लिए इस विषय में उनसे तथा महाराजा से बहुत पत्र-व्यवहार हुआ। अंत में पोलिटिकल एजेन्ट को महाराजा साहब से सहमत होना पड़ा। अतः एक दरबार हुआ जिसमें पोलिटिकल एजेन्ट तथा राज के प्रमुख जागीदार और सरदार उपस्थित थे। सर्व प्रथम महाराजा साहब ने अपने भाषण में उन कठिनाइयों का वर्णन किया जो पुरानी प्रणाली के कारण पग-पग पर उपस्थित होती थीं। इसके बाद नये सुधारों की घोषणा की और सब को सहयोग से काम करने के लिये उत्साहित किया। इसके अनुसार पहले मन्त्री-मण्डल की स्थापना सन् १९०२ ई०

में हुई। इस मन्त्री-मण्डल में महाराजा भैरूसिंहजी, ठाकुर रघुबरसिंह, महाजन के राजा हरिसिंहजी, मिस्टर रुस्तमजी कूपर तथा कुँवर पृथ्वीराजसिंह थे। यहाँ पर यह कह देना आवश्यक है कि बड़े बड़े अफ़सर भी मन ही मन इन सुधारों की सफलता में सन्देह करते थे।

इन सुधारों से प्रत्यक्ष होगया कि महाराजा पहले की चलाई हुई नीति का अन्धानुसरण नहीं करना चाहते थे, वरन् बीकानेर को प्रगतिशील एवं सुव्यवस्थित बनाने के विचार से नई योजनाओं को सफलतापूर्वक कार्य्य में लाने की इन्होंने दृढ़ प्रतिज्ञा करली थी। यह जानते थे कि बीकानेर राज्य की कीर्ति पूर्ववत बनाये रखने के लिये समय के अनुसार परिवर्तन की आवश्यकता है। तथा बीकानेर को माध्यमिक-काल के देश से बदल कर आधुनिक-काल का उन्नत राज्य बनाना आवश्यक है। इसके लिये उन सुधारों की सर्वप्रथम आवश्यकता थी जिनका वर्णन ऊपर किया गया है क्योंकि इन्हीं सुधारों के आधार पर भविष्य के सुधार निर्भर थे।

नवां पाठ

कठिनाइयां

प्रारम्भिक सुधारों का वर्णन हम पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं। अपने मंत्रि-परिषद् को महाराजा ने निश्चित नीति तथा कार्य्य-क्रम बताया। बीकानेर को आधुनिक ढंग का प्रगतिशील राज्य बनाने के लिये निम्नलिखित बातों की आवश्यकता थी—

(१) न्याय-विभाग का फिर संगठन हो और अंग्रेज़ी प्रांतों की भाँति नये कानून बनाये जायें।

(२) ज़मीन का बन्दोबस्त ठीक ढंग से हो एवं उचित भूमि-कर निश्चित किया जाये।

(३) प्रजा के लाभ के लिये स्थान स्थान पर स्कूल एवं अस्पताल खोले जायें।

(४) प्रजा की रक्षा के लिये और राज्य में शांति रखने के लिये पुलिस-विभाग का संगठन हो।

(५) राज्य के प्रत्येक भाग में रेल पहुंचाई जाये तथा अच्छी अच्छी सड़कें बनाई जायें।

(६) खनिज पदार्थों की खोज करके खानों में काम प्रारम्भ किया जाय।

(७) अधिक से अधिक भूमि खेती करने योग्य बनाई जाय ।

(८) व्यवसाय में उन्नति की जाय ।

इस प्रकार उपर्युक्त बातों पर ध्यान देकर राज्य की आय बढ़ाई जाय । इन बातों की सफलता के लिये योग्य कार्य्यकर्त्ताओं और अधिक धन की आवश्यकता थी, परन्तु उस समय इन दोनों साधनों की कमी थी । भिन्न भिन्न ज़िलों का शासन ढीला था । धन का अभाव था । जब महाराजा ने शासन-प्रबन्ध अपने हाथों में लिया तब राज्य की आय २० लाख रुपये से भी कम थी, किन्तु इन कठिनाइयों से ये घबराने वाले नहीं थे । धीरे धीरे सुधार का कार्य्य प्रारम्भ हुआ । प्रति वर्ष नई रेल की लाइनें बिछाई जाने लगीं । सन् १८६८ और १८६६ में रेल से १६००००) रु० आय थी । १६०४—५ में यह बढ़ कर ५०००००) रु० हो गई । यह होते हुए भी शासन-सुधार सब से पहले आवश्यक था । इस लिये प्रारम्भ में तीन बातों पर विशेष ध्यान दिया गया । प्रथम पुलिस तथा अर्थ-विभाग का पुनर्सङ्गठन और अफ़सरों के काम की जांच का प्रबन्ध । द्वितीय नई फ़सल पैदा करने के उपाय और खेती का नया ढंग बता कर काश्तकारों की दशा सुधारना । तृतीय, राज्य में सड़कें और रेलें बनाना ।

पिछले दुर्भिक्ष के कारण महाराजा गंगासिंहजी ने निश्चय कर लिया था कि राज्य के उज्ज्वल भविष्य के लिये प्रत्येक भाग में रेल बनाना और खेतों की सिंचाई का प्रबन्ध करना आवश्यक है। रेल से कई लाभ हैं। इससे राज्य की आय बढ़ती है। अनेकों बेकार मनुष्यों को नौकरी मिलती है और दुर्भिक्ष के समय दूसरे प्रान्तों से अन्न इत्यादि लाकर जनता की रक्षा हो सकती है। परन्तु सिंचाई का प्रबन्ध इससे भी अधिक आवश्यक था। इसके बिना खेती की उन्नति असम्भव थी। साथ ही सिंचाई का प्रबन्ध करना भी बहुत कठिन कार्य्य था, क्योंकि बीकानेर में कोई नदी नहीं है। कूओं से बहुत अधिक सिंचाई होना कठिन है। महाराजा गंगासिंहजी को पूर्ण विश्वास था कि सिंचाई से ही बीकानेर की उन्नति हो सकती है। इनका विचार बीकानेर को हरा भरा बनाना और ऊसर ज़मीन को उपजाऊ बनाना था। अपने इस स्वप्न को कार्यरूप में परिणित करना इनके जीवन की बहुत ही महत्व-पूर्ण घटना है जिसके विषय में हम अगले पाठों में पढ़ेंगे।

नये शासन-सुधार-कार्य्य इस प्रकार होते देख कर कुछ बड़े बड़े राजपूत सरदारों ने इनका विरोध किया। वे जानते थे कि शासन-प्रबन्ध अच्छा होजाने पर उन लोगों

की पहले की तरह धींगा-धींगी और मनमानी नहीं चल सकेगी। बीकानेर के इतिहास से पता चलता है कि आम तौर से यहाँ के राजपूत सरदार स्वामिभक्त होते थे, परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में शासन-प्रबन्ध ढीला पड़ जाने के कारण कुछ सरदार उच्छृङ्खल एवं बीकानेर के शासकों के विरोध करने वाले हो गये थे। चोरों तथा डाकुओं को शरण देना, पास-पड़ोस के स्थानों पर स्वयं डाका डालना या डलवाना तथा एक दूसरे से लड़ना इन लोगों ने अपना साधारण काम बना लिया था। ज़िलों में शक्तिहीन शासन होने के कारण ये लोग भोली भाली जनता को दुःख देते थे। उनसे बल-पूर्वक धन लेते थे और कभी-कभी राज्य की भूमि पर भी अधिकार जमाने का प्रयत्न करते थे। हम पहले पढ़ चुके हैं कि कुछ सरदारों ने महाराजा डूंगरसिंहजी के समय में प्रत्यक्षरूप से विद्रोह किया था परन्तु बृटिश सरकार की सलाह के कारण विद्रोहियों का पूरा दमन नहीं हुवा। उनकी जागीरें उन्हें वापिस मिल गईं। इसका प्रभाव बुरा पड़ा। विद्रोही जागीरदार यह समझने लगे कि यदि फिर इसी प्रकार का आन्दोलन हो और उसमें अङ्गरेज़ सरकार को हस्तक्षेप करना पड़े, तो शासक की शक्ति घटा दी जायगी और उन लोगों को लाभ होगा। इस विचार से महाराजा

गंगासिंहजी के शासनकाल में कुछ असन्तुष्ट जागीर-दारों ने उनका विरोध करने का निश्चय किया।

अपने राज्य के जागीरदारों के प्रति महाराजा की नीति कभी सन्देह-पूर्ण नहीं थी। उनकी भलाई के लिये महाराजा ने वाल्टर नोबुल्स स्कूल की स्थापना की। आरम्भ से बीकानेर के नरेशों को अपने जागीरदारों का सहयोग प्राप्त था। इसलिये उन सरदारों एवं जागीर-दारों की मान-मर्यादा बनाये रखना राजनैतिक बुद्धिमत्ता थी। महाराजा साहब को विश्वास था कि आधुनिक ढंग की शिक्षा प्राप्त कर लेने पर ये सरदारगण शान्तिमय समय में उतने ही उपयोगी सिद्ध होंगे जितने उनके पूर्वज लड़ाई में उपयोगी थे। यह इन सरदारों को राज्य का स्तम्भ समझते थे तथा सदा उनके अधिकारों की रक्षा करने के लिये और उनका सम्मान बनाये रखने के लिये उत्सुक रहते थे।

कुछ ऐसे भी जागीरदार थे जिन्होंने इन सब बातों की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। वे महाराजा के नये सुधारों के पक्ष में नहीं थे क्योंकि वे जानते थे कि न्याय की दृष्टि में सब लोग बराबर समझे जायेंगे और इस कारण वे लोग मनमानी नहीं कर पायेंगे। अतः ये लोग ऐसा आन्दोलन करना चाहते थे जिसके फल

स्वरूप इन्हें अपनी जागीर में फौजदारी एवं दीवानी के अधिकार मिल जायें। अजीतपुरा के ठाकुर भैरूसिंहजी, बीदासर के ठाकुर हुकुमसिंहजी और गोपालपुरा के ठाकुर रामसिंहजी इस आन्दोलन में अगुआ थे। अजीतपुरा का ठाकुर अपनी युवावस्था में महाराजा डूंगरसिंहजी के समय में विद्रोह में भाग ले चुका था। उस समय उसको जुर्माना करके ही क्षमा कर दिया गया। रिजेन्सी-कौंसिल इसके व्यवहार से नाराज़ थी। पोलिटिकल एजेन्ट ने अच्छा चाल-चलन बनाये रखने के लिये इससे ज़मानत ली थी। हिसार जिले की ब्रिटिश पुलिस ने भी इसकी शिकायत की थी। बीदासर का ठाकुर भी विद्रोही था और इसका पिता विद्रोह में भाग लेने के कारण महाराजा डूंगरसिंहजी के समय में जागीर से हटाया गया था। गोपालपुर के ठाकुर के पूर्वज सदा स्वामिभक्त थे, परन्तु ठाकुर रामसिंहजी का व्यवहार अच्छा नहीं था। वह डाकुओं की सहायता से धन कमाने में भी नहीं चूकता था। जोधपुर के रेजिडेन्ट ने लिखा था कि एक प्रसिद्ध रेल की डकैती के मामले में गोपालपुरा के ठाकुर पर उसमें भाग लेने का संदेह किया जाता है।

१९०४ ई० में इन जागीरदारों ने महाराजा के विरुद्ध जनता को झूठी बातें कह २ कर भड़काना प्रारम्भ किया।

इस कार्य्य में इन लोगों ने भय और लालच दिखा कर भी लोगों को अपने पक्ष में करना चाहा। इन लोगों की चाल में कई जागीरदार आ गये। इतना ही नहीं वरन् इन लोगोंने धनी व्यापारियों और सेठों को भड़काने का प्रयत्न किया। सेना को और मुसलमानों को भी भड़काने का प्रयत्न किया।

दशहरे के दिन महाराजा का जन्म-दिन बड़े उत्साह से मनाया जाता है। इस समय एक दरबार होता है जिसमें तमाम जागीरदार उपस्थित होकर महाराजा को नज़र करते हैं। सदा की भाँति ही इस वर्ष भी दशहरे पर सब सरदार एकत्रित हुये परन्तु इस बार इनके व्यवहार में अन्तर था। अगुआ जागीरदारों के घर पर सभायें होने लगीं जिनमें शासन के विरुद्ध कहा जाने लगा। धीरे धीरे यह समाचार महाराजा के कानों तक पहुँचा। उन्होंने चेतावनी देना उचित समझा। इसलिये जन्मोत्सव के अवसर भोज में भाषण देते हुये इन्होंने कहा कि शासक के विरुद्ध कार्य्य में किसी को सम्मिलित नहीं होना चाहिये। यदि किसी को किसी प्रकार की शिकायत हो तो उसकी सुनाई की जायेगी। इस चेतावनी से बहुत से सरदार सँभल गये और उन्होंने विद्रोहियों का साथ छोड़ दिया। परन्तु अगुआ सरदारों ने इस चेतावनी पर कुछ भी

ध्यान नहीं दिया और षड्यन्त्र जारी रहा तब महाराजा ने जरूरी कार्यवाही का हुक्म दिया और २३ अक्तूबर को इनके काम की जाँच के लिये महाराजा ने एक कमेटी नियुक्त की। इस कमेटी की सरसरी जाँच से पता चला कि यदि इन जागीरदारों को कुछ दिनों का समय और मिलता तो राज्य में विद्रोह हो जाता। इसलिये इन लोगों के अपराध की जाँच के लिये एक कमीशन स्थापित किया गया। लगभग दो महीने की जाँच के बाद जिसमें अभियुक्तों को अपने बचाव के लिये प्रत्येक सुविधा प्रदान की गई थीं, कमीशन ने इन सरदारों के ऊपर राजद्रोह का अभियोग पूर्णतः साबित पाया।

कमीशन का निर्णय आजानेपर महाराजा ने जनवरी सन् १९०५ ई० में एक दरबार किया जिसमें पोलिटिकल एजेण्ट मेजर स्ट्रैटन भी सम्मिलित हुये। अफ़सरों और जागीरदारों से महाराजा ने कहा कि जागीरदारों की जागीर तथा मान मर्य्यादा की रक्षा की जायेगी एवं उनके अधिकार सुरक्षित रहेंगे परन्तु उन्हें भी राजभक्त प्रजा बनकर रहना चाहिये। इस घोषणा के बाद दरबार में कमीशन की रिपोर्ट पढ़ी गई। उन लोगों का अपराध भीषण था फिर भी महाराजा उन्हें अधिक सज़ा नहीं देना चाहते थे। इसलिये अजीतपुरा के ठाकुर की आधी जागीर और

गोपालपुरा तथा बीदासर के ठाकुर के एक एक गाँव ज़ब्त किये गये। बीदासर के ठाकुर* का दरबार में स्थान भी घटा दिया गया। इस सजा से पता चलता है कि घोर अपराध होते हुये भी महाराजा ने इन जागीरदारों के साथ दयापूर्ण व्यवहार किया। इससे इनकी राजनैतिक बुद्धिमत्ता का परिचय मिलता है।

विद्रोही जागीरदारों को विश्वास था कि बृटिश सरकार उनका पक्ष लेगी। उन्होंने अंग्रेज़-सरकार से जाँच करने की प्रार्थना भी की। लार्ड कर्ज़न ने महाराजा के निश्चय का समर्थन किया इसपर भी बीदासर के ठाकुर ने गाँव देने में विरोध किया। इसलिये एक सेना भेजी गई जिसने मोमासर को अपने अधिकार में कर लिया।

इस प्रकार अपने ६ वर्ष के शासन में ही महाराजा ने अनेकों सुधार किये। १६०४ ई० में ब्रिटिश सरकार ने इन्हें के. सी. एस. आई. की पदवी प्रदान की और सर आर्थर मार्टिन्डेल ने इनकी भूरि भूरि प्रशंसा की।

यह स्मरण रहे कि इन सुधारों के करने में महाराजा को कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। इनमें से कुछ

*महाराजा साहब ने कृपा करके ठाकुर बहादुरसिंहजी के पौत्र ठाकुर हरिसिंहजी को पुनः पहिले के अनुसार दरबार में बैठक प्रदान की।

कठिनाइयों का वर्णन हम पढ़ चुके हैं। इनके अतिरिक्त पोलिटिकल एजेन्ट की ओर से भी राज-कार्य्य में बहुत हस्तक्षेप होता था। इस प्रकार लगभग ७ वर्षों तक हस्तक्षेप होता रहा वास्तव में भिन्न २ अफ़सरों के भिन्न २ सिद्धान्तों के कारण यह मतभेद था। परन्तु महाराजा की नीति, बुद्धिमत्ता तथा व्यक्तिगत आकर्षण के कारण किसी प्रकार का मनोमालिन्य नहीं उत्पन्न होने पाया। धीरे धीरे यह हस्तक्षेप मिट गया। १६०५ ई० के बाद महाराजा के कार्य्यों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं हुआ। इन सब कठिनाइयों के होते हुये भी शासन-सुधार तथा प्रजा-हित के कार्य्य करना महाराजा की निपुणता का द्योतक है।

दसवां पाठ

शासन-सुधार

प्रारम्भिक सुधारों के करने में महाराजा को जिन जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा उनका वर्णन हम पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं। क्रमशः प्रत्येक कठिनाई को दूर करके महाराजा ने पहले से निश्चित की हुई योजनाओं के अनुसार शासन-सुधार प्रारम्भ किया। सब प्रथम आपने राज-कर्मचारियों को नये सुधारों के अनुसार कार्य्य करने के लिये उत्साहित किया। उस समय की स्थिति का विचार करते हुए यह एक कठिन कार्य्य था क्योंकि कर्मचारियों के लिये पहले से कोई निश्चित पथ न था। उच्च पदों पर बाहर के अफ़सर नियुक्त थे। स्थानीय मनुष्य भी अफ़सर हो जाने पर अपने आपको प्रजा का स्वामी समझने लगते थे। अतः उस समय तक नये सुधारों के अनुसार काम करना कठिन था जब तक राज-कर्मचारियों में सेवा का भाव न उत्पन्न हो। यह परिवर्तन करने के लिए महाराजा ने प्रतिवर्ष शासन-समिति (एडमिनिस्ट्रेटिव कांफ्रेन्स) की बैठक करने का निश्चय किया। महाराजा इस सभा के सभापति

रहते थे। इस सभा में आगामी वर्ष का कार्य्य-क्रम भी निश्चय किया जाता था। पहले इस सभा में केवल स्टेट-कौंसिल तथा महकमा-ख़ास के सेक्रेटरी बैठते थे। परन्तु कुछ वर्षों के बाद प्रत्येक ज़िले के अफ़सर एवं अन्य बड़े अफ़सर भी सम्मिलित होने लगे। यह सभा अब भी प्रति वर्ष होती है।

महाराजा केवल नीति-निर्धारित करके ही सन्तुष्ट नहीं हुये वरन् १९०२ ई० से १९०७ तक आपने यह देखने के लिए राज्य के भिन्न भिन्न भागों का दौरा किया कि उन स्थानों पर नये सुधारों के अनुसार किस प्रकार काम हो रहा है। लोगों का विचार है कि भारतीय नरेशों के दौरे में जनता को कष्ट होता है, क्योंकि उनके शिकार के लिए हाथी, घोड़े, तम्बू तथा अन्य वस्तुओं के प्रबन्ध के लिये देहात की जनता बेगार में पकड़ी जाती है। परन्तु यह बताना आवश्यक है कि महाराजा गंगासिंहजी के दौरे ऊपर लिखे हुए दौरों से सर्वथा भिन्न होते थे। इन अवसरों पर आपका समय निरीक्षण एवं प्रजागण के कष्ट और शिकायतों को सुनने और निवारण करने में व्यतीत होता था। आपके दौरों में दिखावट लेश-मात्र की भी नहीं होती थी। कई स्थान पर आपको ऊँट अथवा घोड़े से यात्रा करनी पड़ती थी।

भारतीय नरेशों के लिये एक सब से बड़ी तथा कठिन समस्या है अपने निजी खर्च को राजकोष से अलग रखना। कई ऐसे नरेश हैं जो राजकोष को अपना निजी धन समझ कर मनमाना खर्च करते हैं। वास्तव में कुछ बड़ी बड़ी रियासतों को छोड़ कर प्रायः सभी रियासतों में नरेशों के निजी कोष तथा राजकोष में कोई अन्तर नहीं था। इसका फल यह होता था कि शासक अपने सुख-साधन के लिये इच्छानुसार व्यय करते थे। यह प्रथा हिन्दू-राज्य प्रणाली के सर्वथा प्रतिकूल है। हिन्दू विचार के अनुसार शासक को अपने खर्च के लिये राज्य की आय में से निश्चित प्रतिशत लेना चाहिये। धार्मिक हिन्दू शासक सदा इस नियम का पालन करते थे। परन्तु अंगरेजी शिक्षा के प्रभाव के कारण एवं पोलो तथा घुड़दौड़ इत्यादि नये नये खर्च के साधन होने के कारण अनेक शासकों ने इस नियम के विरुद्ध कार्य्य करना प्रारम्भ किया और राजकोष से मनमाना धन लेने लगे।

महाराजा गङ्गासिंहजी ने प्रारम्भ से ही यह समझ लिया था और निश्चय कर लिया था कि शासन की सफलता के लिये शासक का निजी कोष राजकोष से भिन्न होना चाहिये। अतः १९०२ ई० में ही आपने

इसके अनुसार कार्य्य प्रारम्भ कर दिया तथा अपना निजी कोष राज की साधारण आय का ५ प्रतिशत रक्खा। शासक के निजी कोष को अंगरेजी में प्रिवी-पर्स कहते हैं। महाराजा शिकार तथा अन्य निजी खर्चों के लिये प्रिवी-पर्स से ही रुपये लेते हैं। इसी प्रकार राज्य के अन्य विभागों के खर्च के लिये भी नियम बना दिये गये। उनके अनुसार वार्षिक बजट बनाने में सरलता हो गई तथा अर्थ विभाग का आधुनिक ढङ्ग पर सङ्गठन हो गया।

इसके पश्चात् महाराजा ने अन्य सुधारों की ओर ध्यान दिया। इस समय मुख्य समस्या थी नये कानूनों की रचना करना। प्रायः भारतीय रियसातों को नये नियम बनाने का कष्ट नहीं उठाना पड़ता क्योंकि भारतीय नरेश ब्रिटिश भारत में बने हुए नये कानूनों को ही अपनी सुविधा के अनुसार बदल कर अपनी रियासतों में प्रचलित करते हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि रियासतों को बिना कष्ट उठाए अच्छे अच्छे नियम बने बनाये मिल जाते हैं। स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार थोड़े परिवर्तन से यह नियम लाभदायक सिद्ध होते हैं। महाराजा गंगासिंहजी के सिंहासन पर विराजने के समय रियासत में कुछ आवश्यक नियमों द्वारा कार्य्य-संचालन होता था। न्याय-विभाग का संगठन करते समय महाराजा

को नये कानून और नियम बनाने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतः १९०८ से १९३१ ई० के बीच के समय में लगभग सत्तर नये नियम (कानून) बने। ये नियम ब्रिटिश भारत के नियमों के आधार पर बने। परन्तु ये ब्रिटिश-भारत के नियमों की अक्षरशः नकल नहीं हैं।

न्याय-विभाग का आपने पुनः संगठन किया। यह बड़े महत्व का सुधार था। उस समय राजपूताने की रियासतों में न्याय-विभाग मध्यकालीन ढंग का था। किसी भी रियासत में चीफ़-कोर्ट अथवा प्रधान न्यायालय नहीं था जिसमें मुकद्दमों की अपील हो सके। अपील प्रायः शासक स्वयं सुनता था। महाराजा गंगासिंहजी ने एक चीफ़-कोर्ट की स्थापना की तथा जज के पद पर अनुभवी अफ़सर नियुक्त किये। राजपूताने में सबसे पहले बीकानेर में चीफ़-कोर्ट स्थापित हुआ। भविष्य में यह चीफ़ कोर्ट बदल कर हाईकोर्ट बना दिया गया।

इसके अतिरिक्त महाराजा ने एक रेवेन्यू-बोर्ड की स्थापना की। यह मालगुज़ारी का प्रबन्ध करती थी। महकमा-खास का फिर से संगठन हुआ। सेक्रेटरियों के अधिकार बढ़ा दिये गये। इससे यह लाभ हुआ कि महाराजा साहब को केवल राज्य-संबन्धी नीति निर्धारित करने का ही नहीं किन्तु अखिल भारतीय प्रश्नों में भाग लेने

के लिये भी अधिक समय मिलने लगा। अब से महाराजा साहब भारतीय नरेशों के संगठन की ओर भी ध्यान देने लगे।

सन् १६०५ ई० में प्रिंस तथा प्रिंसेस आफ वेल्स (जो बाद में सम्राट जार्ज पंचम और साम्राज्ञी मेरी हुए) बीकानेर पधारे। इंगलैंड के युवराज प्रथम बार बीकानेर आ रहें थे। इसके पहले यह कभी बीकानेर नहीं आये थे। इनके आगमन से महाराजा अत्यन्त प्रसन्न हुये क्योंकि महाराजा युवराज के ऑनरेरी ए. डी. सी. भी थे। युवराज का बड़े समारोह से स्वागत हुआ। शिकार खेलने के लिये आप दो दिन गजनेर भी ठहरे। बीकानेर से जाने के बाद युवराज ने निम्नलिखित आशय का पत्र महाराज के पास भेजा—

"बीकानेर से बिदा होते समय मैं फिर कहना चाहता हूँ कि आप के संसर्ग तथा प्रेमपूर्ण स्वागत से मैं तथा राजकुमारी (प्रिंसेस) बहुत प्रसन्न हुये। बीकानेर छोड़ जाने का हम लोगों को बहुत दुःख है।......

मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ कि भारतवर्ष की जो सुखद्-स्मृतियाँ मैं तथा प्रिंसेस अपने साथ ले जायेंगे उनमें से हम लोगों का बीकानेर में आनन्द पूर्वक वास और आप की मित्रता जिसका बन्धन और भी अधिक

दृढ़ हो गया है सबसे अधिक प्रिय होंगे।

वास्तव में प्रिंस आफ वेल्स के आगमन से महाराजा की उनसे जो घनिष्ठ मित्रता स्थापित हुई वह सम्राट पंचम जार्ज के जीवन-काल तक बराबर बनी रही।

महाराजा के शासन-काल के प्रारम्भ से प्रत्येक वाइसराय सरकारी रूप से बीकानेर आये। वाइसराय के सरकारी रूप से आने पर प्रत्येक रियासत में सजावट तथा जलसे इत्यादि होते हैं। एक प्रथा चली आती है कि कोई वाइसराय किसी रियासत में दो बार नहीं जाता। यदि कोई वाइसराय किसी रियासत में दूसरी बार चला जाये तो यह जानना चाहिए कि उस रियासत के शासक पर वाइसराय की विशेष कृपा है।

लार्ड एलगिन के बीकानेर आने का समाचार हम पहले पढ़ चुके हैं। १९०२ ई० में लार्ड कर्ज़न बीकानेर आए। महाराजा ने शासन की बागडोर जब से अपने हाथों में सम्हाली उसके बाद वाइसराय का यह पहला दौरा था। महाराजा ने वाइसराय के स्वागत के लिये बड़ी सजधज से तैयारी की। लार्ड कर्ज़न महाराजा के व्यक्तित्व, दूरदर्शिता एवं राज्य-प्रबन्ध से बहुत प्रसन्न हुये।

लार्ड कर्ज़न के चले जाने पर लार्ड मिंटो वाइसराय नियुक्त हुए। यह भारतीय शासकों के मित्र तथा सच्चे

हितैषी थे। अतः जब लार्ड मिंटो बीकानेर आये तो महाराजा ने अपने भाषण में कहा कि यदि बीकानेर रियासत में नहर बन जाय तो रियासत का एक भाग बहुत उपजाऊ हो जायगा। इस विषय में महाराजा ने वाइसराय से पूर्ण सहयोग की प्रार्थना की। लार्ड मिंटो महाराजा के राज्य-प्रबन्ध एवं सुधारों से बहुत प्रसन्न हुये और नहर बनवाने में पूर्ण सहायता देने की प्रतिज्ञा की। सन् १९०८ ई० में लार्ड मिंटो दूसरी बार बीकानेर आए। यह एक नई बात थी क्योंकि कोई वाइसराय किसी रियासत में एक बार से अधिक नहीं जाता। अतः वाइसराय के दूसरी बार बीकानेर आने से सब को ज्ञात हो गया कि बीकानेर नरेश के सुधारों एवं सुप्रबन्ध के कारण ब्रिटिश सरकार उनसे बहुत प्रसन्न है।

ग्यारहवां पाठ

राजमाता माजी श्रीचन्द्रावतजी साहिबा

महाराजा की माता माजी श्रीचन्द्रावतजी साहिबा का कुछ दिनों की बीमारी के पश्चात् १३ दिसम्बर सन् १९०९ ई० को स्वर्गवास हो गया। किसी को यह विश्वास नहीं था कि आप इतनी जल्दी सबको अपार दुःखसागर में छोड़ कर चली जायेंगी। महाराजा अपनी पूज्या माता के परम भक्त थे। उनकी बीमारी में आप सदा उनकी सेवा में उपस्थित रहे। अभाग्यवश एकाएक उनका देहान्त होगया। राज्य की कुल प्रजा शोक-सागर में डूब गई। अपनी धार्मिकता, दानशीलता तथा कर्त्तव्य परायणता के कारण माजी श्रीचन्द्रावतजी साहिबा ने अपनी प्रिय प्रजा के हृदय में घर कर लिया था। आपके त्याग के विषय में इस प्रकार की एक घटना प्रसिद्ध है:—

महाराजा गंगासिहजी के गद्दी पर बैठने के थोड़े ही दिनों पश्चात् उनके पिता महाराजा श्रीलालसिंहजी का देहान्त हो गया था। उस समय माजी श्रीचन्द्रावतजी के पास ९ लाख रुपये थे उन्हें रिजेन्सी-कौंसिल ने माजी साहिबा से मांगा। वास्तव में यह आपका निजी धन

था जो उनके पति उनको छोड़ गये थे तथा राज्य का इस पर कुछ भी अधिकार नहीं था तिस पर भी रिजेन्सी-कौंसिल यह धन लेना चाहती थी । माजी साहिबा ने कहा कि "यह धन उनके पति की जागीर की आय थी तथा रिजेन्सी-कौंसिल का इस पर कोई अधिकार नहीं है।" इस पर रिजेन्सी-कौंसिल ने उत्तर दिया कि "यदि माजी साहिबा यह धन कौंसिल को न देंगी तो कौंसिल उनके पुत्र महाराजा गंगासिंहजी को उनसे अलग रक्खेगी"। इस पर माजी साहिबा ने यह संपत्ति कौंसिल के सुपुर्द कर दी । बाद में श्रीगंगासिंहजी ने ये रुपये सूद सहित महाराजा श्रीलालसिंहजी के परिवार को दे दिये । महाराजा के छोटे राजकुमार इस परिवार में गोद चले गये।

सर चार्ल्स बेली तथा महाराजा के अध्यापक सर ब्रायन इजर्टन को अच्छी तरह ज्ञात था कि महाराजा की शिक्षा तथा उन्नति के लिए माजी साहिबा सदा उत्सुक रहती हैं। अन्य भारतीय माताओं की भाँति आप महाराजा की शिक्षा तथा उन्नति की योजनाओं में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालती थीं। महाराजा के अभिभावकों तथा अध्यापकों को सदा माजी साहिबा का सहयोग प्राप्त होता था। आपकी धर्मपरायणता तथा दान-शीलता सर्व प्रसिद्ध थी। आप सदैव दीन दुःखियों की सहायता करती थीं

तथा प्रजाहित का सदा ध्यान रखती थीं। अतः सारी प्रजा कृतज्ञता पूर्वक आपका गुणगान करती थी। गवर्नर-जनरल के एजेंट सर इलियट कालविन ने आप के स्वर्ग-वास के बाद समवेदना प्रगट करते हुए अपने तार में सत्य ही लिखा था कि आपकी मृत्यु से समस्त राज्य को हानि हुई।

महाराजा स्वभाव से ही गंभीर हैं तथा अपना दुःख एवं प्रसन्नता साधारणतः प्रगट नहीं होने देते, परन्तु इस दुःखद घटना से आप का भी धैर्य्य टूट गया तथा आप ने इस विषय में प्रिंस आफ़ वेल्स (जो बाद में सम्राट पञ्चम् जार्ज हुए) से अपने हार्दिक भाव प्रकट किये। प्रिंस आफ़ वेल्स इस दुःखद समाचार से अत्यन्त दुःखित हुए और उन्होंने महाराजा के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट की। इस अवसर पर ये दोनों महापुरुष एक दूसरे से अत्यन्त आकर्षित हुए।

महारानी श्रीराणावतजी साहिबा जो महाराजा की प्रथम महारानी थीं, सन् १९०६ में सुरधाम सिधारीं। इनसे महाराजा की तीन सन्तानें हुईं। पहली संतान (पुत्र) का जन्म से कुछ घंटे बाद ही देहान्त हो गया। दूसरी संतान राजकुमारी थीं। इनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था और अन्त में यह राजयक्ष्मा के कारण परलोक

सिधारीं । इनका वर्णन आगे किया जावेगा । तीसरी सन्तान महाराजकुमार श्रीसादुलसिंहजी हैं । इनका जन्म ७ सितम्बर १९०२ ई० को हुआ था। महाराजा ने दूसरा विवाह किया जिससे कोई संतान नहीं हुई। अतः हिन्दू-धर्मानुसार महाराजा ने ३ मई सन् १९०८ ई० को तीसरा विवाह किया । इस विवाह से महाराज के तीन संतानें हुई। महाराजकुमार श्रीविजयसिंहजी का जन्म २९ मार्च १९०९ ई० को हुआ । महाराजकुमार श्रीवीरसिंहजी केवल पांच महीने की अवस्था में परलोकगामी हुए । तीसरी संतान राजकुमारी हुई जिनका जन्म १९१६ में हुआ।

बारहवां पाठ

साम्राट् पंचम जार्ज

राज्याभिषेक तथा दिल्ली दरबार

मई सन् १९१० ई. में साम्राट् एडवर्ड सप्तम का देहान्त होगया उनके बाद उनके पुत्र प्रिंस आफ वेल्स, पंचम जार्ज, सम्राट हुए। महाराजा गंगासिंहजी जो पहले से ही प्रिंस आफ वेल्स के ए. डी. सी. थे, सम्राट जार्ज पंचम के भी एडीकांग घोषित किए गये और आप को कर्नल की उपाधि मिली। साथ ही आपको इंगलैंड में सम्राट के राज्याभिषेक उत्सव में सम्मिलित होने का निमन्त्रण भी मिला। अतः मई सन् १९११ ई० में आप महाराजकुमार सहित इङ्गलैंड के लिए रवाना हुए और २२ मई को लंदन पहुँचे। वहाँ आपको राज्याभिषेक उत्सव के प्रत्येक कार्य्य में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस यात्रा में केम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने आपको एल. एल. डी. की उपाधि प्रदान की। इङ्गलैंड में महाराजा को अनेक सभाओं तथा जलसों में सम्मिलित होना पड़ा और इङ्गलैंड में दो महीने रहने के पश्चात् राज्याभिषेक उत्सव समाप्त होने पर महाराजा बीकानेर लौट आये।

राजतिलक समाप्त होने के कुछ समय पश्चात् सम्राट ने भारतवर्ष आने का निश्चय किया। इस अवसर पर दिल्ली में एक दरबार करने की भी आयोजना की गई। यद्यपि महाराजा का काम लन्दन में समाप्त हो चुका था, परन्तु तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिङ्ग ने आपको दरबार-प्रबन्धक समिति का सदस्य बनाया। महाराजा को इस शाही दरबार के प्रबन्ध में भी बहुत परिश्रम करना पड़ा। दरबार में आप न केवल राजपूताना के प्रमुख शासकों के प्रतिनिधि स्वरूप थे वरन् आपको सम्राट के ए. डी. सी होने का भी सौभाग्य प्राप्त था। अतः जब आप दरबार में सम्राट के बगल में खड़े हुए तो आपके व्यक्तित्व तथा लम्बे कद के कारण पूरे दरबार का ध्यान आपकी ओर आकर्षित हो गया। दिल्ली के दरबार में आपका ब्रिटिश भारत के नेताओं से भी परिचय हुआ। सम्राट पंचम जार्ज के लगातार साथ रहने के कारण सम्राट तथा शाही राजघराने से आपकी मित्रता भी घनिष्ट हो गई।

दिल्ली दरबार में सम्राट ने भारतवर्ष की राजधानी को कलकत्ता से बदल कर दिल्ली में बनाने की घोषणा की। इस परिवर्तन से भारतीय नरेश अत्यन्त प्रसन्न हुए। उनके लिये अब सम्राट के प्रतिनिधि, वाइसराय से मिलना बहुत सरल हो गया। दूसरी बात यह थी कि अनेक शासकों का

दिल्ली के साथ पहले का ही सम्बन्ध था। अतः इस घोषणा के पश्चात् महाराजा ने दिल्ली राजधानी को महारानी मेरी की एक सुन्दर प्रतिमा भेंट की। यह प्रतिमा सर जार्ज फ्रैम्पटन ने बनाई थी और आजकल नई दिल्ली में वाइसराय के महल के सामने स्थित है।

उस समय ब्रिटिश भारत में श्रीगोपालकृष्ण गोखले सर्व-प्रसिद्ध व्यक्ति माने जाते थे। दिल्ली दरबार के बाद उन्होंने भारतीय नरेशों तथा जनता की ओर से ब्रिटिश प्रधान मन्त्री द्वारा अङ्गरेज़ जाति के नाम तार से एक संदेश भेजने का विचार प्रकट किया जिसमें साम्राट और सम्राज्ञी के भारत पधारने से भारतवर्ष तथा इंगलैंड के पारस्पारिक सम्बन्ध दृढ़ होने के विषय में सद्भावना प्रदर्शित हो। महाराजा ने अन्य शासकों से इस सम्बन्ध में भेंट की अंत में निम्नलिखित आशय का संदेश इंगलैंड के प्रधान मन्त्री द्वारा भेजा गया:—

साम्राट् की भारत-यात्रा के समाप्त होने के अवसर पर भारतीय नरेश तथा भारतीय जनता अंग्रेज जनता को अपनी शुभ कामनाओं तथा मित्रता का संदेश भेजते हैं और इस विश्वव्यापी साम्राज्य से अपना अटल सम्बन्ध प्रकट करते हैं। साम्राट् के आगमन से भारत में बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। अपनी सहानुभूति, सद्व्यवहार तथा जनता के प्रति प्रेम के कारण साम्राट् तथा सम्राज्ञी ने इंगलैंड तथा

भारत की मित्रता दृढ़ कर दी है। 'गलैंड के प्रबन्ध से भारत ने जो लाभ उठाये हैं उनके लिए कृतज्ञता प्रकट करते हुये भारतवासी साम्राट् तथा सम्राज्ञी के प्रति अपनी राजभक्ति प्रदर्शित करके भारत के नरेशों तथा जनता को अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त हुई है। वे आशा करते हैं कि यह ऐतिहासिक घटना एक नई योजना की द्योतक है जिससे भारतवासी सम्राज्य में और भी अधिक प्रसन्नता, उन्नति एवं विकास के मार्ग पर अग्रसर होंगे।

तेरहवां पाठ

रजत-जयन्ती (१)

सन् १९१२ ई० में महाराजा को शासन करते पच्चीस वर्ष हो गये थे। वास्तव में पूर्णाधिकार प्राप्त किये हुये आपको केवल तेरह वर्ष ही हुये थे परन्तु इन तेरह वर्षों में इतना अधिक कार्य हुआ कि बीकानेर आधुनिक ढङ्ग का सुव्यवस्थित राज्य बन गया। निम्नलिखित बातों से इस परिवर्तन का पूरा हाल ज्ञात हो जायगा। महाराजा ने जब अपने हाथों में राज्यभार सम्भाला था उस समय राज्य की वार्षिक आय केवल २० लाख रुपये थी। १९१२ ई० में यह आय बढ़कर ४४½ लाख रु० हो गई। सन् १८९८ ई० में राज्य में केवल ८७ मील रेलवे लाइन थी, परन्तु १९१२ ई० में यह बढ़ाकर लगभग ४०० मील कर दी गई। कोयला तथा अन्य खनिज पदार्थों की भी खोज की गई और खानों में कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रजा की दशा में सुधार तथा उन्नति हुई। रब्बी की फसल पैदा करने के लिये काश्तकारों को प्रोत्साहन मिला। यथास्थान रूई की खेती प्रारम्भ हुई चौपायों की दशा सुधारने का भी प्रबन्ध किया गया।

नहर उस समय तक नहीं बन सकी थी। परन्तु सिंचाई के लिये ५५० से भी अधिक कूयें खोदे जा चुके थे।

शासन-सुधार के सम्बन्ध में हम पिछले पाठों में पढ़ चुके हैं कि महाराजा ने शासन के प्रत्येक विभाग में सुधार किये। पुलिस का प्रबन्ध ठीक किया, न्यायालयों का सुधार तथा जनता की सुविधा के लिये नये नये नियम बनाये गये एवं सुचारु-रूप से राज-कार्य संचालन करने के लिए योग्य अफ़सर नियुक्त किये। परन्तु इतने से ही महाराजा सन्तुष्ट नहीं हुए। राज्य की उन्नति तथा प्रजा की भलाई का सदा ध्यान रखना एवं उसके लिये सतत परिश्रम करना आपने अपने जीवन का ध्येय बना लिया था।

इन पच्चीस वर्षों में और भी अनेक प्रजाहित के कार्य आपने किये। स्थान स्थान पर नये स्कूल खोले गये। बीकानेर शहर में एफ़. ए. तक की पढ़ाई का कालेज स्थापित हुआ। सरदारों की शिक्षा के लिये नोबुल्स स्कूल की स्थापना हुई। लड़कियों की पढ़ाई का भी उचित प्रबन्ध किया गया। प्रजाहित के लिये आपने स्थान स्थान पर अस्पताल बनवाये। जब महाराजा ने पूर्णाधिकार प्राप्त किये थे उस समय कुल राज्य में केवल दो अस्पताल थे। महाराजा ने प्रारम्भ से ही इस ओर ध्यान दिया।

अतः १९१२ तक राज्य के लगभग प्रत्येक नगर में अस्पताल बन गये। इसके अतिरिक्त खास बीकानेर में एक बहुत बड़ा अस्पताल स्थापित हुआ। इसमें योग्य एवं अनुभवी डाक्टर नियुक्त किये गये।

इन सुधारों के अतिरिक्त महाराजा ने व्यक्तिगत प्रशंसा के भी अनेक कार्य्य किये थे। केवल १९ वर्ष की अवस्था में आपको भीषण अकाल का सामना करना पड़ा था। इस अवसर पर आपने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया जिसके फल-स्वरूप भारत सरकार ने आपकी भूरि भूरि प्रशंसा की। आप स्वयम् चीन के युद्ध में गए थे तथा वहां जाकर आपने अपनी वीरता का परिचय दिया था। ब्रिटिश सरकार ने आपके कार्यों से प्रसन्न होकर आपको समय समय पर अनेक उपाधियों द्वारा सम्मानित किया। इन सबके विषय में हम पिछले पाठों में पढ़ चुके हैं। अतः रजत-जयन्ती एक विशेष गौरव का अवसर था। वास्तव में यह अवसर महाराजा के लिये अत्यन्त प्रसन्नता का था क्योंकि महाराजा ने थोड़े समय में ही सफलता पूर्वक अनेक सुधार एवं परिवर्तन किये थे।

रजत-जयन्ती बड़ी धूम-धाम से मनाई गई। साम्राट् पञ्चम जार्ज ने इस अवसर पर महाराजा को एक तार भेजा जिसमें आपने लिखा थाः—

"मैं आपको आपके राज्य के पच्चीस वर्ष समाप्त करने पर हार्दिक बधाई देता हूँ और मेरी मनोकामना है कि आप तथा आपकी प्रजा अनेकों वर्षों तक प्रसन्न एवं समृद्ध रहे।"

सन् १९१२ ई० के सितम्बर मास में निश्चित तिथि पर राज्य में जयन्ती मनाई गई। महाराजा ने भिन्न भिन्न धार्मिक कृत्य किये, पूर्व प्रथा के अनुसार दान इत्यादि भी दिये, भिन्न भिन्न संस्थाओं के अभिनन्दन पत्र स्वीकार किये तथा हिन्दू नियमों के अनुसार प्रजाहित के अनेक कार्यों की घोषणा की। बधाई के अनेक अभिनन्दन पत्रों में प्रजा ने केवल अपनी स्वामिभक्ति ही नहीं प्रकट की थी वरन् महाराजा के कार्यों से गौरवान्वित होकर महाराजा के प्रति अपना प्रेम भी प्रदर्शित किया था।

रजत-जयन्ती का कार्य-क्रम साधारण था परन्तु प्रजा इससे बहुत प्रभावित हुई। २० तथा २१ सितम्बर को फौजी तथा अन्य बड़े अफ़सरों को दावतें दी गईं। २२ तारीख़ को महाराजा धूम धाम के साथ लवाज़में सहित श्री लक्ष्मीनाथजी के मन्दिर में धार्मिक कृत्य के लिये गए। २३ तारीख़ को फ़ौज को फ़ौजी झण्डे भेंट किये गये। २४ तारीख़ को रजत-जयन्ती का असली उत्सव था। इसी दिन प्रातःकाल १०१ तोपों की सलामी हुई।

इसके बाद प्राचीन भारतीय प्रथा के अनुसार कैदी छोड़े गए। धार्मिक कृत्य समाप्त होने पर सुबह साढ़े आठ बजे महाराजा ने गंगानिवास हाल में दरबार किया। इस दरबार में रेज़िडेन्ट, बड़े सरदार एवं अन्य बड़े अफ़सर उपस्थित थे। कर्नल विंढम ने महाराजा को इस शुभ अवसर पर बधाई देते हुए अपने भाषण में कहा कि महाराजा सात वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे और उन्होंने शीघ्र ही अपने प्राचीन राज्य की उन्नति एवं सुधारों की ओर ध्यान दिया था। यह बड़ी प्रसन्नता तथा गौरव की बात है कि महाराजा आज तक अपने प्रत्येक कार्य में सफल हुए। अपने भाषण में आपने यह भी कहा कि "बीकानेर के अतिरिक्त अन्य किसी भी भारतीय राज्य में प्राचीन सभ्यता एवं राजा तथा राजपरिवार की प्रथाओं का पाश्चात्य विज्ञान, शक्ति एवं कार्य-कुशलता के साथ इतना सुन्दर सम्मिश्रण नहीं मिलता।"

चौदहवां पाठ

रजत-जयन्ती (२)

अपने भाषण में महाराजा ने अपने शासन के प्रारम्भ से लेकर रजत-जयन्ती तक के कार्यों पर दृष्टिपात किया एवं अपनी सफलता पर परम पिता परमात्मा का धन्यवाद प्रकट किया। महाराजा अपनी सफलताओं पर केवल संतोष प्रकट करके रहने वाले नहीं थे। आपको भविष्य का पूरा ध्यान था। आपने भारतवर्ष में जो परिवर्तन हो रहा था उसकी ओर पूरा ध्यान दिया। आपने भली प्रकार जान लिया कि भारत की प्राचीन राज्य-प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है। अतः अपने भाषण में महाराजा ने बीकानेर में एक व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव-असेम्बली) स्थापित करने की घोषणा की। उत्तरी भारत के राज्यों में यह पहली व्यवस्थापिका सभा थी। बीकानेर की अवस्था देखते हुए यह कहना पड़ेगा कि महाराजा की यह घोषणा अत्यन्त साहस का कार्य था। यह सत्य है कि ट्रावन्कोर, मैसूर और बड़ौदा में गत बीस वर्षों से व्यवस्थापिका सभाएँ थीं। परन्तु उन राज्यों की तथा बीकानेर की दशा में बड़ा अन्तर था। मैसूर और

ट्रावनकोर में बहुत दिनों तक ब्रिटिश प्रान्तों की भांति शासन-कार्य हो चुका था। इसके अतिरिक्त इन तीनों राज्यों की प्रजा बहुत शिक्षित थी। बीकानेर की दशा इसके विपरीत थी। प्रारम्भ से ही बीकानेर एक वीरत्व प्रधान देश रहा है। राज्य में उमराव गण तथा सरदार शक्तिशाली रहते थे एवं अनेक उपद्रवों के बाद राज्य की सत्ता स्वीकार की थी। अनेक प्रकार के प्रयत्न होते हुए भी शिक्षा की विशेष उन्नति नहीं हुई थी। सच तो यह है कि माध्यमिक काल की दशा से निकल कर बीकानेर राज्य ने कुछ ही समय पहले आधुनिक ढंग पर चलना आरम्भ किया था। अतः ऐसी अवस्था में व्यवस्थापिका सभा की स्थापना करना साहस का काम था। इसकी सफलता अथवा असफलता के विषय में उस समय निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता था।

रजत-जयन्ती पर महाराजा ने प्रजाहित की अन्य घोषणायें भी कीं। हिन्दी राज-कार्य की भाषा घोषित की गई। हम पहले पढ़ चुके हैं कि रिजेन्सी-कौंसिल ने बाहर से आये हुये अफ़सरों की सुविधा के लिये उर्दू राज-कार्य की भाषा बना दिया था। प्रजा को इससे अनेक कठिनाइयां उठानी पड़ी थीं क्योंकि यहाँ के लोगों की मातृभाषा हिन्दी है तथा उनके व्यापार सम्बन्धी एवं अन्य सभी

कार्य हिन्दी भाषा में होते हैं। अतः महाराजा ने हिन्दी को कचहरी एवं राजकार्य भाषा घोषित किया। रिज़ेन्सी-कौंसिल ने सिले हुए कपड़ों एवं गहनों पर कर लगा दिया था। महाराजा ने इन पर से कर उठा देने की घोषणा की। आपने प्रजा की शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया। सरकारी हाई स्कूल को बढ़ाकर कालेज बना दिया गया। जनता की ओर से स्कूल स्थापित करने के लिये आर्थिक सहायता देने का निश्चय किया गया। उच्च शिक्षा के प्रबन्ध के लिये शिक्षा विभाग का संगठन हुआ तथा डाइरेक्टर की नियुक्ति हुई। विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति (वज़ीफ़े) दी जाने लगी। स्कूलों में विद्यार्थियों की सुविधा के लिये छात्रावास की आयोजना हुई। पर्दे में रहने वाली बालिकाओं की शिक्षा के लिये अध्यापिकाएं नियुक्त हुईं।

जनता के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये अनेकों नए अस्पताल खोले गए। बीकानेर में स्त्रियों के लिए अलग अस्पताल बनाए। बड़े अस्पताल में "एकसरे" मशीन स्थापित की गई एवं अन्य नगरों में अस्पताल स्थापित हुए।

आपने अपने सरदारों की भलाई के लिये अनेकों कर माफ़ कर दिये। सरदार गण न्यायालयों में स्वयं

उपस्थित होने से मुक्त किये गये एवं कोर्ट आफ़ वार्डज़ से जागीर वापिस लेने के लिये बालिग़ी की अवस्था २१ वर्ष से घटा कर १८ वर्ष निश्चित की गई। काश्तकारों को पिछला लगान जो उन्होंने अभी नहीं दिया था माफ़ कर दिया गया। राज्य के बाहर से आये हुये लोगों को बीकानेर की प्रजा के अधिकार प्राप्त करने की सुविधा मिली।

इस जयन्ती के अवसर पर और भी बहुत से कार्य एवं उत्सव हुए जिनका वर्णन स्थानाभाव के कारण यहां नहीं किया जा सकता। परन्तु एक घटना विशेष महत्व की है। उसका वर्णन यहां किया जाता है। अपने शासन के प्रारम्भ से महाराजा ने राज्य के कुछ विभागों में, जिन में विशेषज्ञों की आवश्यकता थी, योरोपीय अफ़सर नियुक्त किये थे। इन अफ़सरों ने भक्तिपूर्वक कार्य-संचालन किया था। महाराजा इन अफ़सरों के अच्छे कार्यों से प्रसन्न थे एवं ये अफ़सर अपने स्वामी महाराजा श्रीगंगासिंहजी के सद्व्यवहार से संतुष्ट थे। राज के इन योरोपीय निवासियों ने रजत-जयन्ती के अवसर पर महाराजा को विक्टोरिया मेमोरियल क्लब में एक शान-दार दावत दी। महाराजकुमार के अध्यापक कर्नल बेक उसके सभापति थे। उन्होंने अपने भाषण में महाराजा के

सद्व्यवहार एवं कृपा की अत्यन्त प्रशंसा की । महाराजा ने भी उनको धन्यवाद देते हुए अंग्रेज़ असफ़रों के प्रति अपनी नीति का वर्णन किया ।

रजत-जयन्ती का महान् उत्सव दिसम्बर मास तक के लिये स्थगित कर दिया गया था क्योंकि वाइसराय लार्ड हार्डिङ्ग उस समय बीकानेर आने वाले थे। लार्ड हार्डिङ्ग के बीकानेर आने का यह पहला अवसर था । अतः वाइसराय के स्वागत के लिये बड़े समारोह से तैयारी होने लगी । महाराजा ने स्वयं इसका प्रबन्ध किया ।

सन् १९१३ ई० के फ़रवरी मास में अनेक भारतीय नरेश बीकानेर आये । महाराजा के कार्यों से सब प्रभावित थे। अतः उनमें से अनेक महाराजा के प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित करने के लिये बीकानेर आए । एक हफ्ते तक खूब चहल पहल रही । जुबिली का समय ऐतिहासिक दृष्टि से बड़े महत्व का है । अपने शासनकाल के प्रारम्भ से जुबिली के समय तक महाराजा अपने राज्य के कार्य में ही लगे थे । जयन्ती के बाद महाराजा ने भारतवर्ष एवं साम्राज्य के कार्यों में भाग लेना आरम्भ किया तथा अपनी कार्य-कुशलता से बीकानेर को थोड़े ही दिनों में जगत् विख्यात बना दिया । जयन्ती के बाद दस वर्षों के भीतर महाराजा वर्साई की सन्धि में गये, राष्ट्रसंघ (लीग

आफ़ नेशन्ज़) के सदस्य हुए एवं नरेन्द्र मण्डल के प्रधान चुने गए। भारतीय नरेशों के अधिकार की रक्षा एवं अपनी मातृभूमि भारतवर्ष की उन्नति के लिए महाराजा ने जो कार्य किये उनका हाल हम आगे पढ़ेंगे।

पन्द्रहवां पाठ

"नरेन्द्र मण्डल को स्थापित करने का प्रयत्न"

लार्ड हार्डिङ्ग (१९१०-१६) के वाइसराय होने के पहले भारत सरकार का देशी राज्यों के प्रति व्यवहार इस प्रकार का था मानो प्रत्येक देशी राज्य एक अलग विदेशी शक्ति हो। भारत सरकार देशी राज्यों को आपस में किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं स्थापित करने देती थी। यदि कोई शासक दूसरे राज्य में वहां के शासक से मिलने के लिए जाता तो उनको भारत सरकार सन्देह की दृष्टि से देखती थी। भारत सरकार की यह नीति ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ज़माने से चली आ रही थी। उस समय हैदराबाद के निज़ाम, ग्वालियर नरेश, महाराजा सिंधिया एवं महाराजा इन्दौर ने अंग्रेज़ों का घोर विरोध किया था। अतः ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपनी विदेशी नीति का यह मुख्य ध्येय बनाया कि भारत के देशी राज्य आपस में मिलने न पायें। हर एक देशी शासक से सन्धि करते समय यह शर्त अवश्य रखी जाती थी कि वह शासक दूसरे राज्यों के शासकों के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रक्खेगा, तथा निकटवर्ती राज्य से मतभेद होने पर कम्पनी को

अपना मध्यस्थ बनायगा। इस प्रकार जिस समय हर एक राज्य को अलग करने की नीति कम्पनी ने चलाई थी उस समय कम्पनी को इस नीति की आवश्यकता थी। यदि कम्पनी ऐसी नीति का पालन नहीं करती तो देशी राज्य किसी योग्य नेता की अध्यक्षता में आपस में मिल कर कम्पनी की बढ़ती हुई शक्ति का सफलता पूर्वक विरोध कर सकते थे। सन् १८५७ ई० के गदर ने इस नीति को और अधिक पुष्ट बना दिया था। लोगों का यह विचार हुआ कि जब अकेली जनता अंग्रेज़ी शक्ति का इतना अधिक विरोध कर सकती है तो देशी राज्यों के आपस में मिल जाने पर अंग्रेजों को और भी अधिक विपत्ति का सामना करना पड़ेगा। इस विपत्ति से बचने के लिये ही भारत सरकार ने देशी नरेशों को अलग रखने की नीति का अवलम्बन किया।

परन्तु अंग्रेज सरकार के कुछ अफ़सरों का विचार होने लगा था कि अब इस नीति के पालन करने की आवश्यकता नहीं रह गई है। इन अफ़सरों की राय थी कि देशी राज्यों के मान-मर्यादा के लिये तथा उनकी शक्ति से लाभ उठाने के लिये भारत सरकार को चाहिये कि उनका सहयोग प्राप्त करे। इस सम्बन्ध में १८७६ ई० में लार्ड लिटन ने भारतवर्ष के लिये एक प्रधान प्रिवीकौंसिल

का प्रस्ताव किया था। उस प्रस्ताव के अनुसार कुछ चुने हुए भारतीय नरेश एवं कुछ भारत सरकार के अफ़सर उक्त कौंसिल के सदस्य होते, परन्तु प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हुआ। इसके स्थान पर कुछ भारतीय नरेशों को "सम्राज्ञी के सलाहकार" होने का सम्मान प्राप्त हुआ परन्तु यह सभा केवल नाम मात्र की थी और इसकी बैठक कभी नहीं हुई।

उसी वर्ष मेयो कालेज स्थापित करने के लिए लार्ड लिटन ने राजपूताने के शासकों की सलाह लेने के लिए उन्हें एकत्रित किया। यह घटना महत्व की है क्योंकि वाइसराय की अध्यक्षता में नरेशों की यह पहली सभा थी जिसमें वे अपने हित के विषय में विचार करने के लिए एकत्रित हुए। लार्ड कर्ज़न ने भारतीय नरेशों की दो वार सभाएँ कीं। १९०४ में चीफ्स कालेज के सम्बन्ध में और १९०५ ई० में इम्पिरियल सर्विस ट्रूप के विषय में लार्ड हार्डिङ्ग ने सबसे अधिक दूरदर्शिता का काम किया। वह जानता था कि भारत सरकार को देशी राज्यों से मिलकर काम करने में बहुत लाभ होगा। बहुत दिनों से महाराजा बीकानेर का भी इस ओर ध्यान आकर्पित हुआ था। सन् १९१४ ई० के जनवरी मास में महाराजा ने वाइसराय के पास यह प्रस्ताव भेजा कि कोई ऐसी संस्था अथवा

सभा होनी आवश्यक है जो भारत सरकार एवं देशी राज्यों में उचित सहयोग स्थापित कर सके। मिंटो-मार्ले सुधार के समय भारत सरकार ने सलाह-कार्य के लिये देशी शासकों की एक सभा स्थापित करने का निश्चय किया था परन्तु यह सभा अभी तक कार्यरूप में परिणत नहीं हुई थी। भारत सरकार की इस अकर्मण्यता पर असंतोष प्रकट करते हुए महाराजा ने कहा कि भारत सरकार के जिन कार्यों का प्रभाव सारे भारतवर्ष पर पड़ने वाला हो उन कार्यों में भारत सरकार को देशी राज्यों के शासकों की सलाह लेनी चाहिए क्योंकि भारत का एक तिहाई भाग देशी नरेशों के आधीन है। साम्राज्य की रक्षा के लिए भी यह आवश्यक है कि भारत सरकार इन शासकों की सलाह ले तथा उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त करे। अतः देशी नरेशों की प्रबल इच्छा है कि शासकों की एक ऐसी संस्था स्थापित की जाये जो साम्राज्य सम्बन्धी कार्यों में सरकार को सलाह दे सके एवं देशी राज्यों की भलाई तथा उन्नति के सम्बन्ध में विचार प्रकट कर सके। इस प्रकार धीरे धीरे ऐसी संस्था स्थापित हो जायगी जो संघ-शासन का रूप धारण कर लेगी इस प्रकार की स्थायी संस्था शीघ्र से शीघ्र स्थापित होनी चाहिए। इस संस्था का स्थायी दफ्तर होना चाहिए

तथा इसका कार्य-संचालन करने के लिए एक सैक्रेटरी की नियुक्ति भी आवश्यक है।

महाराजा का यह प्रस्ताव बड़े महत्त्व का था। आप ने प्रथम उस संघ-शासन की ओर संकेत किया जिसकी योजना का समर्थन आपने भविष्य में गोलमेज़ सभा (राउण्ड टेबल कान्फरेन्स) में १६ वर्ष पश्चात् किया। दूसरे आपने देशी नरेशों की संस्था स्थापित करने का प्रस्ताव किया। भविष्य में इस प्रस्ताव के अनुसार शासकों की एक सभा स्थापित हुई जो नरेन्द्र-मण्डल के नाम से विख्यात है। इन दोनों प्रस्तावों के विषय में हम इस पुस्तक के द्वितीय भाग में पढ़ेंगे।

लार्ड हार्डिङ्ग एक महान् राजनीतिज्ञ था। वह देशी शासकों से सहानुभूति रखता था एवं भारतवासियों का भी हितैषी था। उसने महाराजा के प्रस्ताव का समर्थन किया। वह जानता था कि महाराजा बीकानेर एक दूर-दर्शी शासक, साम्राज्य के हितैषी, परमदेशभक्त एवं महान् राजनीतिज्ञ हैं। ३ मार्च सन् १९१४ ई० को उस ने चीफ्स कालेज के सम्बन्ध में दिल्ली में एक सभा की। इस सभा में उसने देशी शासकों से सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा "मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि महाराजा बीकानेर ने जो विचार प्रकट किये हैं उनसे मेरी

हार्दिक सहानुभूति है" । इस सभा के बाद 'टाइम्ज़ आफ़ इण्डिया अख़बार' ने अपने सम्पादकीय लेख में महाराजा बीकानेर के भारत एवं देशी राज्यों में पारस्पारिक घनिष्ट सम्बन्ध उत्पन्न करने तथा संघ-स्थापना के प्रस्तावों की बहुत प्रशंसा की ।

१९१४ ई० के अगस्त मास में योरोपीय महायुद्ध प्रारम्भ हो गया । इस युद्ध के कारण शासकों की एक सभा स्थापित करने के विचार को और भी अधिक प्रोत्साहन मिला । शासकों ने ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए धन जन से भारत सरकार की खूब सहायता की । अतः भारत सरकार ने उनकी सलाह लेने के लिये एक सभा स्थापित करने का निश्चय किया तथा १९१६ ई० में अस्थायी रूप से शासकों की एक सभा भी बुलाई गई ।

सोलहवां पाठ

लार्ड हार्डिङ्ग के विचार

पिछले पाठों में कई स्थानों पर हम लार्ड हार्डिङ्ग के विषय में पढ़ चुके हैं। यह सन् १९१० ई० से सन् १९१६ ई० तक भारतवर्ष का वाइसराय था। अपने शासनकाल में यह महाराजा श्रीगंगासिंहजी की नीति निपुणता, उच्च विचार, सद्व्यवहार, लोकप्रियता, प्रजाहितैषिता, एवं अन्य सद्गुणों से बहुत प्रभावित हुआ। उसने महाराजा की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि :—

"१९१० ई० में कलकत्ते के गवर्नमेण्ट हाऊस में मेरे सबसे पहले अतिथि महाराजा बीकानेर तथा महाराजा ग्वालियर थे। १९१६ ई० में भारतवर्ष से जाने के समय तक दोनों ही मेरे सच्चे तथा घनिष्ट मित्र रहें। दोनों मित्र हर प्रकार से बहुत अच्छे स्वभाव के थे। भारतीय नरेशों को जिस प्रकार होना चाहिए और जिस प्रकार के वे होते हैं उसी तरह के ये दोनों मित्र आदर्श व्यक्ति थे।

भारतवर्ष में मेरे थोड़े से शासनकाल के अनुभव से ही मैं यह कह सकता हूं कि उस थोड़े से समय में बीकानेर राज्य ने अत्यधिक उन्नति की। बीकानेर रेगिस्तान है,

और प्रकृति को ओर से उदासीनता है परन्तु फिर भी इसने दूसरे अच्छे जलवायु वाले राज्यों से अधिक भौतिक उन्नति की। सिंचाई न होने के कारण पहले यहां प्रायः दुर्भिक्ष पड़ा करते थे परन्तु अब ६,२०,००० एकड़ ज़मीन की सिंचाई का प्रबन्ध होगया है। सिंचाई के प्रबन्ध के विषय में मेरे शासनकाल में लिखा-पढ़ी चल रही थी।

जब महाराजा ने शासन-प्रबन्ध अपने हाथों में लिया उस समय राज्य में केवल ८५ मील लम्बी एक रेलवे लाइन थी। इस समय राज्य में लगभग ८०० मील लम्बी रेल की लाइन है।

बालकों एवं बालिकाओं की प्रारम्भिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा के प्रसार में भारत के किसी भी राज्य को इतना गर्व नहीं हो सकता जितना बीकानेर को है। मुझे स्मरण है कि बीकानेर नगर के एक स्कूल में मैं गया था। इस स्कूल में दस बारह वर्ष की अवस्था के बालक पढ़ते थे। मैंने उनसे अंकगणित के साधारण तथा चक्रवृद्धि ब्याज के प्रश्न पूछे। मुझे यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि इन बालकों ने ये प्रश्न ज़बानी हल करके ठीक ठीक उत्तर दिये।

जिस समय मैं भारतवर्ष में था उस समय महाराजा ने अपने राज्य में व्यवस्थापिका सभा स्थापित करने की

इच्छा प्रकट की। मैंने महाराजा की इच्छा का स्वागत किया तथा उन्हें उत्साहित किया। फलतः १९१३ ई० में व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव असैम्बली) की स्थापना हुई। बीकानेर की जनता ने इस सभा की मांग पेश नहीं की थी। यह सभा सफलतापूर्वक कार्य कर रही है तथा इसमें गैर सरकारी सदस्यों की संख्या अधिक है। राज्य के मुख्य मुख्य नगरों में हर समय म्यूनिसिपैलिटियाँ हैं, देहातों के प्रबन्ध के लिये एक डिस्ट्रिक्ट बोर्ड है एवं गांवों में पञ्चायतें हैं।

दूसरी संस्था नरेन्द्र-मण्डल है। इसकी स्थापना में महाराजा ने बहुत दिलचस्पी ली तथा इसमें आपने महत्व का कार्य किया। १९१४ ई० में देशी राज्यों और शासकों के हित का विचार करने के लिये जो शासकों की अस्थायी सभा बुलाई गई थी उसी सभा को आगे चल कर नरेन्द्र मण्डल का रूप दे दिया गया। भारत की शासन-व्यवस्था का नरेन्द्र-मण्डल एक प्रमुख अंग है।

बीकानेर नगर बहुत सुन्दर राजधानी है। कोई भी नरेश ऐसी सुन्दर राजधानी पर गर्व कर सकता है। यहाँ पुराना किला है, महाराजा का सुन्दर महल है तथा भिन्न विभागों के कार्य के लिये सुन्दर और सुदृढ़ इमारतें हैं।

महाराजा से मेरा निजी सम्बन्ध सदा मित्रता का रहा

है। यह मित्रता आपस के संपर्क से और भी दृढ़ हो गई। मुझे वे सुखमय दिवस स्मरण हैं जब बीकानेर, गजनेर एवं अन्य स्थानों में महाराजा के स्वागत ने मुझे प्रसन्नता प्रदान की। मुझे वे दिन कभी नहीं भूलेंगे जब मैंने महाराजा के साथ सुअर, बुटबड़, हरिण एवं अन्य जानवरों का शिकार किया। महाराजा अनुपम शिकारी हैं तथा बन्दूक और राइफ़ल से अचूक निशाना लगाते हैं। मेरी समझ में देश की वास्तविक स्थिति जानने के लिये प्रत्येक वाइसराय तथा गवर्नर के लिये देशी नरेशों से मेलजोल रखना आवश्यक है और इसी भाँति जिन राजनैतिक महत्वपूर्ण कार्यों का प्रभाव देशी राज्यों एवं ब्रिटिश भारत पर पड़ने वाला हो उसके विषय में भी जनता की सम्मति जानने के लिये देशी नरेशों से मिलना आवश्यक है।

मैं महाराजा की मित्रता का सम्मान करता हूँ और आशा करता हूँ कि अपने राज्य तथा भारत की भलाई के लिये ईश्वर उनको चिरायु करेंगे।"

—:०:—